मैं - मेरा अष्टावक्र

हरीश भादानी

नथमल ताराचन्द
केसरी चन्द बोथरा
परिजनों की
ओर से
भावना के साथ



कलासन प्रकाशन
कल्याणी भवन, बीकानेर (राज)

ISBN No 81 86842 29-2

प्रकाशक	कलासन प्रकाशन
सस्करण	प्रथम 1999
मूल्य	200 रुपये
मुद्रक	कल्याणी प्रिन्टर्स माल गोदाम रोड बीकानेर

MAIN-MERA ASHTAWAKRA
By Harish Bhadani

Rs 200/-

अभिमत

बीकानेर

'मै-मेरा अष्टावक्र' सुपरिचित कवि हरीश भादानी की नई रचना है सवेदना और शिल्प दोनो आयामो पर विचारोत्तेजक और नई। यह कृति अगली सदी की दहलीज पर खड़े हमारे अपने समय के रोमाचक और सर्वाश्लेषी यथार्थ उसकी विद्रूपताओ और विडम्बनाओ का एक जीवित दस्तावेज है जो हमे अपने भीतर झॉकने और यह सोचने को विवश करता है कि युग के यथार्थ के जिस चेहरे से हम मुखातिब है उसम व्यक्ति के हमारे अपने चेहरे क अक्स कहॉ और कितनी व्याप्ति तक मौजूद है। यह रचना वस्तुत एक आत्मालाप, एक आत्म-साक्षात्कार या आत्म-सवाद है अपने द्वारा अपने से ही की गई एक वैचारिक मुठभेड़ जद्दोजहद या कशमकश। यह एक जीवत बहस है जिसम सवादी और विवादी एक ही व्यक्ति है- व्यक्ति का जिज्ञासु मन और उसके भीतर बैठा उसका जाग्रत प्रतिरूप उसे रह-रहकर झिझोड़ता और आत्मसजग करता हुआ। यह अपने माध्यम से अपने को फिर से टटालने पहचानने आर पढने का एक सजीदा प्रयास है। जैसे जैस यह मुठभेड़ तीखी और गहरी होती जाती है रचना का सवेदनात्मक तथा विचारगत फलक भी व्यापक और प्रशस्त होता जाता है उसकी व्याप्ति आत्मबोध से जगतबोध तक प्रागैतिहासिक अतीत से ठेठ अद्यतन कालावधि तक और वर्तमान स आगत तक होती जाती है। मनुष्य के रूप मे धरती पर अवतरित होने से लेकर अब तक वैश्विक ज्ञान विज्ञान सभ्यता और सस्कृति विचार और कर्म इन सारे स्तरो पर मनुष्य ने जो कुछ रचा-गढा किया धरा और मागा है इन सबसे जुड़े सदर्भ रोजमर्रा की साधारण से साधारण घटनाएँ और सूचनाएँ ख्यात अल्पख्यात और हाशिए की जिदगी जीने वाले साधारण जन सब उपर्युक्त सदर्भो मे गुँथे हमारे सामने आत और अपने अपने स्तर पर हमारे यथार्थ-बोध हमारे जीवन-विवेक हमारे कर्मो आचरणो और युग के उभरते हुए चेहरे और चरित्र पर सार्थक टिप्पणियाँ करते हुए अपनी व्यजनागर्भी अहमियत पाते है।

हरीश भादानी ने इस रचना म अपन आत्म सघर्ष क जरिए अपने को और अपने युग को फिर फिर पढने और पहचानने का तथा उन्हे उजागर करने का प्रयास किया है। यह पहचान और पाठ देने वाला है अष्टावक्र का मिथकीय चरित्र जिसका बड़ा सार्थक और रचनात्मक इस्तेमाल हरीश भादानी ने किया है। समूची रचना विचार के धरातल पर रचित है किंतु विचार रचना मे जिस भाषाई-अदाज मे आचलिक बोली बानी की जिस सश्लिष्टता मे तथा वार्तालाप की जिस अनापचारिक शैली मे सामने लाए गए है रचना बोली बानी के खास आचलिक लहजे से

अपरिचित पाठको को भले कुछ असहज लगे वह विचार-बोझिल नहीं होने पाई है। अष्टावक्र का दोस्ताना अदाज पाठक को रचना मे शुरु से अत तक अपना सहभागी बनाए रखता है।

विचार के धरातल पर ही सही रचना मे नि सदेह हरीश भादानी ने अपने युग से एक निर्मम साक्षात्कार किया है। वैश्विक सदर्भो के अलावा समूचा भारतीय इतिहास इस रचना मे उस भारत को, भारत के उस यथार्थ को उसकी भीतरी तह तक जानने-समझने मे हमारा निमित्त बना है जो आज हमारी आँखो के सामने है और जिसकी छायाएँ आगामी शताब्दी के एक लबे प्रसार को समेटते हमे दिखाई पड़ रही है। यह सब कुछ रचनाकार ने हम कौन थे क्या हो गए के अदाज मे नहीं निपट निर्ममता और वस्तुनिष्ठता से हमारे सामने उजागर किया है। इसमे हमारे स्वाधीनता सग्राम आधुनिक नवजागरण हमारे सास्कृतिक अतीत के वे मूल्यगत विपर्यय और विडबनाएँ भी है जिनमे हमने अपने स्वत्त्व को खोजना और पाना चाहा था और जो आज हमारे हाथो से फिसलकर भूमडलीकरण विश्वग्राम जैसी व्यवस्थाओ एव आर्थिक उदारीकरण के चलते जन्म लेने वाले चरम सुखभोगमूलक पाशविक उपभोक्तावाद तथा उससे जुड़ी अपसस्कृति मे कहीं गुम हो चुका है या गुम होता दिखाई पड़ रहा है। अष्टावक्रइस विपर्यय तथा त्रासदी को रचना मे हमारे सामने मूर्त्त करता है हमे सावधान और सजग करता है यही इस मिथकीय चरित्र की रचना मे फलश्रुति है।

मै हरीश भादानी की इस विचारोत्तेजक रचना और उनके इस रचनात्मक आत्मसघर्ष दोनो के लिए उन्हे साधुवाद देता हूँ। यदि सही आत्मबोध सभव हो सके तो जगतबोध तक उसकी व्याप्ति सहज ही हो सकती है 'स्व को पाकर ही हम पर या विश्व तक अपना प्रसार कर सकते है। अपनी बुनियादी प्रगतिशील सोच पर कायम रहते हुए हरीश भादानी इस रचना मे अपने अधीत मन को उसकी समूची रचनात्मक सभावनाओ के साथ उजागर कर सके है। परिपक्व मन की उतनी ही सजीदा तथा परिपक्व फलभुति के रूप मे उनकी इस रचना का स्वागत होगा इसका मुझे विश्वास है।

शिव कुमार

पूर्व विभागाध्यक्ष हिन्दी
वल्लभ विद्यापीठ

17 मानसरोवर पार्क
वल्लभ विद्यानगर गुजरात 388 120

"मै-मेरा अष्टावक्र"
के मेरे अपने कारण

मुझसे पूछा जा सकता है कि 'नष्टोमोह और पितृकल्प के बाद फिर एक और लम्बी कविता लिखने की आवश्यकता मुझे क्यो लगी?

नष्टोमोह' का घटक अपने कुरूप अतीत के पृष्ठो को उलट-पलटता व्यामोहो से मुक्त होने की प्रक्रिया मे अपने बाहर के यथार्थ से रू ब रू तो होता है पर वह है वहा अकेला ही। उसका बाहर भी इतना उलझा हुआ है कि अकेले की उसकी यात्रा उसे तत्परता दिखाती है पर झूझने की प्रक्रिया बेबाक रूप मे उभर नहीं पाती। फिर 'नष्टोमोह का समय और घटक का यथार्थ 1970 से 1980 के बीच का है।

जबकि पितृकल्प का समय 1980 से 1990 का है। इस अवधि मे रचना के इस घटक को अपना परिवेश नष्टोमोह की तुलना मे अधिक सवेदन शून्य लगा है। अतीत इसमे भी इससे नहीं छूटा है पर वह अपने परिवेश के कटु यथार्थ पर अधिक मुखर होता है। मुखर होने की प्रक्रिया मे वह निरा अकला नहीं दिखता। वह बारहा अपने जैसे आजियों से सम्बोधित होता है। झूझने बदलने पर आमादा दिखता है। वह अपने अतीत से भी इतना ही लिया चाहता है जो उसके आज को साध सके आज के दो दशको मे आए बदलावो ने दोनो ही रचनाओ के घटक को अपने अपने ढग से नोचा-खरोचा है। इस घटक को लगता रहा है कि इन दोनो ही रचनाओ मे परिवेश से मिली खरोचें कहीं गहरे-फीके रगो मे उभरी है।

इसी प्रक्रिया मे इस घटक को लगता रहा है कि सामाजिक परिवेश और मानवीय सम्बन्धो मे आने वाले बदलावो की गति उसके अपने अनुमानो से अधिक तेज है। तेज गति के ये झपाटे- ये खरोचें उसे थका ठहरा भी सकती हैं वह शायद बचाव की मुद्राए लेता हुआ कदराए-खोह बनाने लग जाए निपट मै का यह सोच उसके सामाजिक मै- मनुष्यका बावलिया काटा सा लगता है। बस वह अष्टावक्र के रूप मे उसके रू-ब रू हो जाता है।

एकाकी व्यक्ति के भीतर का सामाजिक मै नहीं चाहता कि उसी का व्यक्ति-मै इस तरह अपने यथार्थ से आख चुराकर शून्य मे ही सब कुछ खोजने लगे उसी मे अपने होने का सार्थक मानने लगे।

वह टेढ़ी भगिमा के साथ लगातार कड़वी भाषा मे जहा सवाद करता है वहा उसे निपट यथार्थ भी दिखाता चलता है।

अष्टावक्र इस मै को बताना चाहता है कि ऐसे यथार्थ को भोगना उसकी नियति नहीं है वह अपने अनुकूल यथार्थ का विधायक भी बनता है। अष्टावक्र उसकी विधायी शक्ति को उसके सामने रुपायित करता है। व्यक्ति का यह सामाजिक मै ही एक ऐसे ससार की कल्पना करता है जिसमे मनुष्य सास्कारिक स्तर पर सामाजिक मनुष्य होकर जीना चाहता है। ऐसी कल्पना के ताने बाने मे वह केवल मै नहीं रह जाता। यह उपभोक्तावादी दृष्टि से धरती को गाव का स्वरुप देने वाली ताकतो को हकलाता हुआ धरती को सवादी मनुष्यो का घर और व्यक्ति के वैश्वानर रुप को उदघाटित करना चाहता है। इस तरह से यह रचना अपने से सवाद है। निपट बौना होकर जीने के सोच को हरा होने से रोकने का प्रयत्न है।

सभ्यता और सस्कृति के अब तक के स्वरुपो का जायजा ले तो लगेगा कि व्यक्ति मे छोटे और एकाकी मै तथा दोहरेपन के रहते हुए भी उसमे सामाजिक जीवेषणा प्रबल रही है। इसी के चलते कुरुप बनाई जाती धरती का रुप रह रहकर निखरता रहा है। मे मेरा अष्टावक्र कितने निस्सग होकर सवाद कर सके है। भाषा का खुरदरा और घालमेली स्वरुप कथ्य के अनुकूल रहता हुआ सम्प्रेषित हो सका है या नही यह तो शब्द को रचना रुप देने वालो से जान सकूगा।

हा मुझे इसकी प्रतीक्षा तो रहेगी कि यदि निपट मै, सामाजिक मै और उसके वैश्वानर रुप के ठहराव मे कही दूरी रही है कहीं दौर्बल्य रहा है तो धीपति पाठक मुझे दिखाए ताकि मै स्वय को सशोधित परिवर्धित करने का एक अवसर और ले सकू।

हरीश भादानी

छबीली घाटी
बीकानेर [राजस्थान]
जून 1998

बाग्ला रगकर्म को

समर्पित

"ग्रुप थियेटर" (त्रैमासिक) के

सम्पादक

आदरणीय बधु

रमन माहेश्वरी

के लिए

मैं - मेरा अष्टावक्र

मै और मेरा अष्टावक्र

मै

जब भी लगता है
पसीना एक-एक कपड़े को
शरीर से चिपका कर
पॉवो तले की कीचड़ हो गया है
और जमीदोज नाले को
गो-मुख बना कर
अरड़ा[1] आई बदबू की गगा
छपाक-छपाक पीटने लगी है
मेरे भीतर को,
दो फाड़ तो नही होती देह
पर चोला तो
हो ही जाता है लीर-लीर
चौतरफा की ठेलमठेल से,
जाने किस पल लथेड़ दे मुझे
सड़क पर घरघराते पहिये
थमते ही नही
पीठ-छाती पर
धौल-धुक जमाते भो-भो-पो-पो,
कर देते है कानो मे
आर-पार के सूराख
सायरन और सीटिया
गोया आदमी नहीं
जैसलमेरी पत्थर हूॅ मै

---

1 उफन आई

ऐसे ही किन्ही क्षणो मे
लेने बैठ जाता हूँ फैसला–
'अपने आप से
बोलते रहने की हसरत लिए ही
डूब जाऊ इस जजाळ मे
अगली सास के आते-आते '

सोच के इस फैसले पर
कलम की नोक तोड़ू
इससे पहले ही दिख जाती है वह
थमक जाता है मेरा हाथ,
उमग उठती है
भीतर ही भीतर एक चाह–
आईना बिना देखे ही मान लेता हूँ–
गुलाबी डोरे लहर लिए है
मेरी बडरी आखो मे
और मै उस उस पर
एकदम टीकी-बम[1],
दिखती तो नही फरफरती चूनर
फिर भी लगे ही
वळ खा-खा कर
उतरती ही आए है काळी कळायण[2],

इतना-भर देख कर ही
उतार लेता हू अपने आगे
रग-रगो मे उसके नाक-नक्श
उसकी देह-यष्टि
खुले-खुले केशो वाली
साक्षात सैरध्री

1 ध्यानस्थ 2 काली घटा

तभी सुनू– सटक सटक
आजू-बाजू आखे फिराऊ–
यह नहीं, वह नहीं
येSSS वो-वोSSS भी नही
सब चाट गई पलक झपकते
ऐसी लम्बूतरी है
उस अदेहा की सुरसा[1]

ठडी फुहारे छूटती लगे मुझे अपने मे से
फूस की तरह
सरका कर अपने सोच को
यू फैला दू अपनी बाहे
गोया अपने मे भर लेना चाहू उसे,
घूम घूमू इधर से उधर
टकरना तो दूर
आहट तक नही किसी की
हा सनन-सनन की छुअन से
सिहर तो जाऊ ही

लगता है– मै फैल रहा हू
मै ऊँचा रहा हू
उड़ता-उड़ता ही सोच जाऊ–
रहने ही क्यो दू अपने इस अचरज पर
अदेशे की हल्की-सी ही रज्री[1]
आखे मल-मल कर देखू
किसी एक का भी वुज़ूद नहीं
जिनसे खार खाया मै
बैठ गया था लेने
अपने आप से

1 धूल की परत

बोलने की हसरत लिए ही
इस अभयारण्य मे
हमेशा-हमेशा के लिए
गुम हो जाने का फैसला,'

तभी छतरी-सी खुल जाती है
कानो के ऊपर
मेरी हथेलिया
'कोई भी नहीं जैसे
अभी-अभी उपजे विश्वास को
हौले से थपथपा देता हू
और यहीं बता देता है
गेद पर बल्ला मारकर
विकेट की ओर लपक लौटता
गागुली-सा मेरा सोच—
'यहा तो हवा तक
कोलतार-सी ठस पड़ी है
और वे जो फुटपाथो से परहेज कर
लटके है न बीचोबीच
एक-एक को पाण्डु लग गया है
यहा न किसी जीवित की गध
और न ही जलते मास की चिराध
यहा तो सिर्फ तू
या फिर तेरी ',

ऐसी ही घड़ी मे
मान लेता हूँ अपने को
एक, अकेला अशोक स्तम्भ ।
नरीमन प्वाइट पर खड़ा २१वा माला ।
या फिर सचार मीनार

नही नही आज के
इस ऊँचाते ससार मे ये तो निरे बोने
तब तब और मथू बात का दही
निकल ही आए चिकना मक्खन,
बस, उड़ना- परी पी टी उषा से
बाजी मारती मेरी बाकी फग्गग-फग्गग
झपट ही लेती है
रामकिकर महाराज की बाणी मे
लकाकाण्ड की गूज का छूछा--
झिझोड़ कर कहे मुझसे, ले, सुन
'राम-भगत बजरग बली ने
लक्ष्मण की खातिर
कितनी लम्बी फदाक लगाई थी
और ले ही आए सजीवनी '
फिर मै तो नये-निकोर आज का
अपने हा अपने लिए
उससे ही होड़ बदू
येSS लो जा बैठा हूँ
एम्पायर स्टेट बिल्डिग को अगूठा दिखाती
सिगापुरी भवन की मुडेर पर,
यह हुआ चमचमता सोच,
कितना अनूठा लगे
आकाश मे बैठे-बैठे उसे निहारते,
उससे खुसर-फुसरालाप करते ।

मेरा अष्टावक्र किससे बतियाये है भाई
ऊपर ही ऊपर ताकता,
वहा तो कोई भी नही दिखता
मै तो यहा हू ।

मै

यहा तो हवा की
सनन-सनन तक नही थी
फिर यह आवाज
कहा से बज आई?

मेरा अष्टावक्र

हवा नही होती तो
कब का लमलेट हो गया होता तू
और पता भी नही चलता, हाSSS

मै

मगर मैने तो
आखे फाड़-फाड़ कर देखा
यह कूट   वह कूट[1]
कोई भी नही था यहा
इस टननटन के पहले तक
छाते की तरिया खोले थे कान
पत्ती-पत्ती चुप
फिर यह टोक   ,

मेरा अष्टावक्र

टोक नहीं प्यारे
यह तो मै हू मै
अपनी गर्दन के एगल को
जरा धरती की ओर झुका तो
तेरे ही भीतर का मे
बद था न तेरी सुरग मे!
आगे गढ-कोट जैसी पिरोळ
भीतर ना कोई झरोखा
सास भी लू तो
पिरोळ की तरेड़ो से नाक सटाकर
फिर कुडे मे लटकता

---

1 दिशा या कोना

तौक-सा गोदरेज भी
जी जाने भैया
एक-एक सेकड रात-दिन बरोबर
घाम भी नही सूखा है अब तक

मै

मेरी सुरग   मेरे भीतर
गढ जैसा गेट
उस पर भी ताला   ।
तब तू भीतर कैसे घुसा रे
और ताला किसने खोला?

मेरा अष्टावक्र

रहू तो मै तेरे ही भीतर
ताला फाटक तू ही जड़े
फिर पता नहीं क्या-क्या करे
यह तो तू ही जाने
हा, मेरे बाहर आने का
जिम्मा भी तुझ पर ही
अपनी झक मे ताने है न तू
आकाश मे तोत के तम्बू,
बस छिटक ही गई चाबी,
नस-नस फटने को थी
तेरी इस गुटरगू से
झत्र के साथ ही झपट ली चाबी
और आ गया तेरी कुई से बाहर,

मै

पर तू है कौन?
मै तो जानता भी नही तुझे
रहे मेरे भीतर
और मुझे पता ही न चले
यह नही हो सकता

फिर भी तू कहे अपने को
मेरे भीतर का म
कभी देखा-देखी भी तो ,

मेरा अष्टावक्र तू देखना चाहे तब तो दिखू
मुझे नही जानता
तभी तो वका करे है अपने आप से,
अरेSSS मुझे देख लिया करे तो
ऐसे डोळ[1] थोड़े रहे तेरे
पहले देख अच्छी तरिया, फिर सुन—
मै तेरा ही मै हू,
मेरा घर, मेरा पता-ठिकाना तू,
यह तो तू अपने आगे के
इतने बड़े बाहर और अपनी आखो के बीच
रामलीला वाला पर्दा डाल कर
क्या कहा था तूने अभी हाSSS
कभी उस लाट कभी उस मस्तूल पर
बैठ अपनी उस
अदेहा से सटा-सटा ही रहना चाहे
तब-तब मुझे ज्यू-त्यू
बाहर आ जाना पड़े
पता है तुझे कितनी बार
टोक गया हू- पर तू तो
पचो का हुकुम सर माथे
परनाळा तो यहीं से ,'

मगर तेरे भीतर का
मै भी तो एक ही
तेरे होने के छेकड़ले[2] पल तक

---

1 हालत 2 अन्तिम

क्यो छोड़ू तेरा पीछा?
आज फिर कहू तुझ से
खोल अपने कानो के खिड़क—
अपने आप से
वे ही बोला करते है भाई
जिनका मन बीमार होता है
क्या तुझे भी
कोई ऐसी-वैसी बीमारी ?

मै

नही, नहीं मुझे कोई
हारी-बीमारी नही,
बीमार होता तो दवा-दारू लेकर
कब का चगा हो गया होता,
तुझे बीमार लगता हूँ क्या मै?
मुझे तो तेरी आखो मे ही
मैल-कीच दिखे
पहले इन्हे तो धो-पौछ
शरीर से तो बीमार हुआ करे लोग
पर यह मन से बीमार
कौन होता है, कैसे होता है ?

यहा कोई भी नहीं था
निपट ओम शान्ति शान्ति शान्ति
बिराज रही थी मेरे अगल-बगल,
उस उस ऊपर तक,
तभी तो उठी हुड़क ~
उससे बतियाने की
और आन टपका तू
बे-बखत के टपूकडे जैसा
पहले पता होता तो

लाल बत्ती जला कर बैठता
जानता है या नही
किसी का एकान्त तोडना
कोरा नैतिक ही नहीं
कानूनी अपराध भी है
अगर मै चाहू तो तुझ पर
हा, नाम क्या है तेरा
लगे तो ठीक मुझ जैसा ही,

मेरा अष्टावक्र लगू लो, बोलोSSS
अरे मै तो हू ही तेरा असल मै
मगर मै तुझसे
तेरा नाम नही पूछूगा
समझता रह खुद को
श्री अलान-फलान, कुमार प्रशान्त
आक्रोश-उदघोष कुछ भी
मगर फिलवक्त
मै न तेरा अलान-फलान
और न ही श्री उदघोष-आक्रोश
अभी तो मै केवल तेरा अष्टावक्र
माफ करना यार!
जीभ मे आटा-सा आ गया
आखिर हूँ भी तो मै तेरा ही मै न,
मेरा यह नाम तो
बोल ही नहीं पाया है तू अब तक,
हा पुर्जे पर अटकाने तो
कई-कई बार बैठा है
पर हिज्जे तो
हर बार खोटी ही लिखी
सोचता हू, तुझे कोई सहज-सा

छोटा-सा नाम बता दू ,
ठहर, तूने अपने छुटपन मे
ऋ-लृ-लट, रामा रामौ
गच्छ-गच्छति तो रटे ही है
चल, इस पाकी उमर मे
मेरे नाम का इत्ता-सा
अनुवाद भी गोखले[1]-
अष्टावक्र का अर्थ होता है
आठ अगो से आका-बाका
आगे से, पीछू से
दाये, बाये किधर से भी छुओ
साSSला खुभे ही
अब आड़े-तिरछे को
बाथो[2] मे कोई क्यो भरे भला!
फिर जो बाहर से विकलाग
भीतर भी तो ऊबड़-खाबड़ ही रहे
क्यो, है न सद्यी बात?

मेरे इस थोबड़े पर
छोटा-सा मोखा देखे है तो
इसके भीतर पूरमपूर गस्से
डालने की मेरी बिसात[3] ही
पाव की चिटूली अगुली जितनी
कटखने-वटखने बोलो के सिवा
इससे बाहर और क्या निसरे,
खैर, तू तो मेरे नाम का
दूजा अरथ याद करले—
बोलचाल की भाषा मे
अष्टावक्र को कहा जाए बूझ बुझाकड़[4]

1 याद करना 2 बाहों 3 हैसियत 4 हर घड़ी पूछने वाला

पर यह तो राजस्थानी
वह भी धुर पच्छिम का
और तू ठहरा वोSSS मॉडरन, हे न!
तो सरल हिन्दी मे
इसका उलथा[1] हुआ सवालिया
यू अचकचा मत, धावस[2] रख
समझले चार विस्वे का
इसका खुलासा भी
सवालिया इजीकुलटू
लगोलग सवाल पर सवाल दागन वाला
अर्थात वातेरी, समझ गया तो!

मै — नहीं समझा आर
चाहता भी नहीं समझना
गुरु द्रोण का नाम सुना है क्या तूने
कैसा कड़ा इम्तहान लिया था
अपने गबरू चेलो का
पर हजारो मे एक ही पाण्डु-पट्ठा
आकर ही रहा फर्स्ट-क्लास
सो भाई! वो है न शिखरनी
सपना नही, एकदम साक्षात
मै तो उस-मय ही होना चाहू
तू जरा चुप साध परे बैठे तो
उससे ही दो पल ,

मेरा अष्टावक्र — अरे रुक रुक तो !!
यही तो मै कहना चाहू
बड़े पते की बात तेरे भी
काम आ जाए शायद—

1 अनुवाद 2 धीरज

एक वार सूना शिखर देखने की
महती भूल मुझ से भी हुई
राई-जीरा भी चुगले तो
जमारा सुधर जाए जमारा[1], हाSSS

ऐसा हुआ रे एक दिन
मै वाचने बैठ गया
'कोहली की रामायण'
उसमे से निकसी रामजी की मूरत
अपने देश मे भजे जाते राम तो
हर-हर आदमजात से
बीस हाथ ऊँचे
फिर कोहली भाई के पास
कागजो के कई-कई पर्वत,
जोड़ पर जोड़ लगा कर
बिठा दिया दाशरथी का शरीर
देखना तो पड़ा ही
गर्दन-ऑख ही उठग गई
गळपट्टा बधने पर ही झुकी
भला-सा नाम भी
गर्दन मे आ जाती मोच का
शहर वाले उसे स्पोंडला कहे,
सो भैये वो दिन कि आज
न देखू कोई शिखर और न ही
सून से होड़ लगाती मूरत,
लकड़ी-कागज पर
कोयले-पिन्सल से
भूलभुलैया उकेरते अपने शिकु से
खर्रे पर खर्रे टीपती देवानी

---

1 जीवन

ओर नवलेलाल भाई मूळनाथ के
कानो पर जब-तव
वजा दिया करू अपना वाजा--
तिरछाट वालो! लड़ानी ही पड़ जाय
कहीं किसी से आख
लड़ाना अपने समय से ही
आज से ही नापना
अपनी सुबह और शाम

पर तू तो आमादा है
वहा जा आसन लगाने
जा   हा पेट्रोल तो भरवा लिया न
अपने उड़ना-जहाज मे
अब भरवाएगा   ! तब सुनले--
इण्डियन आयल वाला तो
तुझे पोसायेगा[1] नहीं,
ऐसा कर, पहले तू
अपने विध्याचल के पार जा
वहा मिलेगा तुझे
खाटी कीमियागर रामूलू
पानी-पत्ती घोल-पका कर
बनाया है उसने हर्बल पेट्रोल
भाव-- एक रुपिया लीटर
क्यो बताई न पते की बात!
अब तो वता, वहा बैठ कर
क्या-क्या बतियाना चाहता रहा है
दो-चार बोल तो मुझे भी चखा

मै   चखा   अब क्या खाक चखाऊ

1 बर्दास्त सहन

तूने तो सूक्ष्म तरग का तार ही
तोड़ कर धर दिया
वहा जाता बोलता हुआ तैरता
सपनो के समदर मे,
गोते पर गोते लगाकर निकाल लाता
अपने होने का
पूरमपाट पारदरस मोती
फिर तुझ अकेले को ही क्यो
मुझ पर आख भेगी रखने वाले
हर एक को दिखाता—
देखो! ऐसा है मेरा होना
पर तू तो मेरे आगे
अरावली-आडावल[1],
अब मै किस अगस्त्य को पुकारू
जो तुझसे कहे— परे हट परे
और उसके पीछू-पीछू
मै भी हो जाऊ वोSSS पारSSS,

मेरा अष्टावक्र मुझे ही मानले
अगस्त्य का सड़काऊ पीठाधिपत
आ, चल मेरे साथ
ले चलू तुझे 'अलमत्ती' के मुहाने
ई पार 'नायडू' से सीखना—
'इतना पानी
इतना पानी तो बस मेरा पानी
उस घाट पर से कन्नड़ गूजे—
'यह पानी मेरा ही पानी '
पल्ले नहीं पड़ी न
यह कड़-कड़-गुम कड़-कड़-गुम

---
1 बाधा

तब जरा पीछे झाक–
बाउलिये गाए इकतारे पर
'ना आमार जौल
ना तोमार जौल
ऐ जोल सोबे मानुषेर जौल ',

मै

मेरे भेजे मे
न तेरा ई-उ पार आवे
और ना ही यह जौल-टौल
तू तो वो बता
कहा था न तूने मन का बीमार–
वह कैसा होता है,
कहा रहता है,
तूने देखा है कभी उसे?

मेरा अष्टावक्र

यह भी तूने भली कही
मै तो रोज ही देखू ऐसो-ऐसो को
अभी भी मेरे सामने ही है
पर इस पल मैने तुझे
एक क्लास का
अपना उस्ताद मान ही लिया
अरे! वह भी कोई बीमार
जिसे अपनी बीमारी याद रहे
समझ का एकाध कणूका[1] तो
बच ही गया है तुझमे
कोई बात नही, सींच ही दूगा
तेरी फोफस जमीन,
रिसे ही है मोहताजी के कूए मे पानी
दो-चार बाजरी के सिट्टे

---

1 दाना

ता लहलहा ही ताग
यह मन तुझ से नही
अपन आप स कहा ह रे
कभी-कभार म भी
बोल लिया करू अपने-आप से
तरी छाया जा पडती रहे मुझ पर

हा ता बात यह ह बधु[1]
मुझ बातेरी की
एक पूछ तो पकड़ ही ली तूने
यू टुच-पुच-टुच-पुच ही
बोलता रहा न मुझसे
सच कहू चोटी म न सही
अपने इस अलफिया झब्बे म ही
गाठ बाध कर रखले-
खूब गहरी छनेगी अपन दोनो म
नाखून भी बढ जाएगे तेरे
मै तो देखता ही रह जाऊगा
लीर-लीर करने लगा हे तू
अपने आगे झूलता तिरपाल
और यू देखे है अपने बाहर को
रीझ जाय कोई माटियार[1]
पूगळ[2] की पदमणी पर

म तूने मुझ अपना
स्टूडेट समझ लिया है क्या
बोले ही जाए है
प्रो सरकार की तरह
अरे आज के किसी मास्टर को देखा है!

---

1 नोजवान 2 सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध पश्चिमी राजस्थान का क्षेत्र

मूल पोथी दो किलो से चिपटी कम
मगर गाइड   मात्र दोसो ग्राम
तू तो मुझे मन के बीमार का
हुलिया बता हुलिया
म भी जानू, देखू तो
अपने घर मे भी कई बीमार देखे
वैद्द-डाक्टरो ने ही किया इलाज
तेरे वालो पर
सुरखाब के पख तो नहीं ही लगे होते,

मेरा अष्टावक्र   नहीं रेऽऽ हुए-होवे तो
ठीक तेरे ही रूप-सरूप जैसे
पर कितने-कितने,
गिनाऊँ-दिखाऊँ
मन के बीमारो का
इतिहास ही इतना वजनी
इतना वजनी कि वोऽऽ होती है न
पचीस-पचास टन
एक साथ तौकने वाली   हाऽऽ क्रेन
उस तक से न हिले,
फिर हर बरस- हर दिन की
लिखाट भी तो जुडती जाए

मै   यह क्या बोले तू
इतिहास तो इतिहास ही होता है
फिर हर बरस- हर दिन का
क्या मतलब होता है?
देख भाई साफ लफ्जो मे
बताना है तो बता
मन के बीमार का खुलासा

मुझे तेरे या उनके
इतिहास से क्या लेना-देना
तुझे और कोई काम-धाम नही क्या
यू खींचे ही जाए
बात नही रवड़ हो ,

मेरा अष्टावक्र तेरा किससे कितना लेना-देना है
यह तो मै
तेरी समझ के आदि दिन से जानू
पर यह चलते-चलते
निरा मोगामढी क्यो हो जाया करता है?
अरे जो दिन, बरस बीत गया
वही हो गया इतिहास
अब तक का तेरा चौपनिया
पर मैडम इन्दिरा गाधी का
मण-भर पोथ,
तूने तो देखा ही है उनको
क्या-क्या नहीं किया उन्होने
अमरफल चखने के बाद,
अपनी अदम मौज़ूदगी मे ही
गड़वा दिया करतबो का कैपसूल
धरती की नाभि मे
और तो और
विनोबा की भू-दानी कठी तोड़ कर
सड़क पर आ गए जे पी तक को
बख्तरबद गाड़ी मे बिठाकर
आखा शहर ही नही
जेल दिखा कर भी पूछ लिया
कहो किसकी है राजधानी?
क्या उत्तर हो सकता था

नये ससारी के पास?
यू ही होता रहता है भरकम
मन के बीमारो का इतिहास,
सुने है तो, जैसे चले तेरी यह टिक-टिक
उससे होड़ वदते चले
तेरे-मेरे देश के उड़ना-परे-परिया
मगर इन सवको
पछाट देती चले परवा-पछवा[1],
कभी दिखणादी तो धुर उत्तरा भी
जव-तव उड़ाती रहे
बीमारो के कारजनामो के
ओळिये पर ओळिये[2]
कभी इधर से उधर तो कभी उधर से
सो भैये, मै भी पढ जाऊँ
कई-कई नाम, तारीखे
पर याद तो ईन-मीन[3] ही रहे ,

मै — *खखो खखो* *खसू खसू*
जरा ठहर, खास तो लेने दे बीरा
तुझे सुनते तो दम ही उपड़ आया
हाSS तोSS तुझे भी ईन-मीन ही याद रहे,

मेरा अष्टावक्र — हा भाई, वह भी तेरे कारण
तू जो पलाथी लगाए रखे
अब वद कर अपनी खखो-खखो
सुन मुझ से बीमारो की गाथा--
पहले-दूजे-सातवे-नौवे का तो
मै भी काळा-धोळा नहीं जानू
यह वात अलग कि

---
1 पूर्वी हवा पछवा हवा 2 पन्ने 3 थोड़े

आज का जाया 'रोजर हाइफील्ड'[1]
इस गाथा के प्रथम पुरुष का
सही ठिकाना खोजने मे लगा है कि
तेरा-मेरा ही नही
खुद रोजर की नसल का पहला बाप
इस धरती की कूख से फूटा
या मगल ग्रह से टपका
खैर, इसे यही छोड़ू ,

हा, तो बीमारो की इस ख्यात[2]
के जिस-जिस सफे पर
मेरी आख दौड़ा करी
अटके रह गए कुछ नाम, तू भी सुनले–
प्यारे भाई! गाथा के इस धोरे[3]
नही, अछोरी पिरेमिड के
एक पन्ने पर एम्बोस्ड सौरी
गहरी स्याही मे उभरा हुआ है
तुझ-मुझ जैसे सिरफिरो को छोड़
आखी आदमजात के
पहले जनक का नाम– ब्रह्मा
अब आज के ससार की
कुल जमा तीन हजार चौसठ भाषाओ मे
तू इसे ओम्बो-गोम्बो
या फिर बभो समझले
सस्किरत-भैखरी-ढूढाड़ी मे उलथाले
मगर अपन की बोली मे
इस बेटी-लट्टू नाम के बाद
जहा-तहा छपे है– मनु, इन्दर
ऋषि-ब्रह्मरिषी फिरSSS फिरSS

1 वैज्ञानिक का नाम 2 लम्बी कथा 3 रेत का टीला

चक्रवरती दाशरथी, कौरव-पाण्डव
सुदर्शन चक्रधारी,
कई-कई ओगो-पोगा से
अटक लिया करते फक्कड़ कवीर जैसे भी
यहा से उचका-सा लाघू तो
अपुन के जमाने का लगोटिया भी पढ जाऊ,

मेरी तो आखे
देख, फिर आ गई जीभ दातो तले
दरअसल तो मै शुक्राचार्य हूँ
पढते-पढते वह भी मिचमिचा जाए
पर दयालू समय-मास्टर तो
चिपका ही रहे न मुझसे
फौरन नाक पर चश्मा चढा कर कहे
अब पढ बेटा!
फिर तो सतर-सतर उतरता जाऊ
माड[1] राग जैसा ही लगे
सुन– अ से अम्बानी,
ल से लार्ड पाल, ब से बोफरस
ग से गैस, ह माने हवाला
च हो गया चारा, म से मकान
और अ से हुआ अलॉट
यू दीदे टिकाए है क्या तूने
सर्फ पाउडर से धुली
एक भी झकझक किताब पर?

मै आखिर तूने मुझे समझा क्या है
अब किताब की बात भी
तुझसे समझू क्या?

1 राजस्थान की एक रागिनी

फड़[1] फाड़ता आया है न तू कि
मेरा आकाश-पाताल तक जाने,
ले देख, ग्लोब जैसा मेरा मस्तक
धूप से नहीं धोया है मैने
न आए तुझ-सा बड़-बोलना
पर खाते पर खाते तो
आज भी भरे जाऊँ
कितनी जिल्दे बन गई है
एक पर भी आख खोली है कभी
मुझ से नहीं, लोगो से ही सुन
'पढे तो मन शीतल और
सुने   *लगे अमृत पिये'*
ऐसे लिखे का मोल तू क्या कूतेगा?
यह तो मै जानू या फिर
आने वाली पीढिया
छानेगी ये कोश   वो कोश
बताएगी अपने युग को
ये-ये आयाम इन शब्दो के

मेरा अष्टावक्र   हिप्प-हिप्प हुर्रे तीन बार
तेरे इस श्रीमुख पर
अरे, मेरी 'वर्नाकूलर' अग्रेजी की
तीसरी क्लास की किताब
झख पर झख मारे,
उसमे ही पढी मैने 'शेखचिल्ली' की कहानी,

आयाम किसे कहे भैया
यह तो नहीं जानू,
हा *'राजे भाई की आयाम'*[2]

1 डींग हाकना, 2 नाट्य संस्था

रग-करम तो करे
दाड़मनगरी[1] के आर-पार,
हा, नई पीढी से खूब-खूब रू-ब-रू
अब तू यह तो बता
तेरे घर मे है न वे
काधे को लाघते-से
वे क्या खाए-पिए,
क्या-क्या सुन-बाचे
उनकी सैन-बोलिया भी
समझ सके है क्या कभी
फिर वे क्या को क्या करना चाहे
बता तो मुझे, नहीं न,
तब फिर यही बता दे यार[1]
तू उनके लिए क्या राधे-पोये[2]
तेरा रचा देखे भी है कभी वे
तब तेरे इस चुप्पे का मेरे तई
हा नही, सिर्फ नही हाSS हा नहीं,

तू और लेखक[1] हा, भाई
इस ससार मे जो-जो होता रहता है
वह कही और थोड़े घटता है
अब लिखने वाले
तेरे हाथ तो बाधने से रहा
मुझे तो तेरे इस गूमड़ मे
रेगा करे है न, उसकी फिकर है खर्रेखान,

मै मेरा नाम खर्रेखान नहीं है
कहे देता हूँ, हाSSS
मेरा तो जीवन ही विवेक

1 बीकानेर 2 भोजन

विवेक से रचना रचना मे
खोजते ही जाना अपना होना
और तू बात करे निपट गामेड़ी जैसी
बहुत बोल लिया
अब चलता-फिरता नज़र आ तो
बोलने का भी सलीका नही ,

मेरा अष्टावक्र

गामेड़ी न होने का दुख तो
मुझे भी कई-कई बार खाये रे
असल गाव का आसिया होता न
कब का फैंक देता
तेरे माथे मे उगा यह झुरमुट
मठोठी देकर जैसे वह
अपने खेत के बूझे उपाडे,

मान लिया तू खर्रेखा नही
तू तो ग्रथजी, वाल्यूमजी
श्री समग्रजी[1] ठीक तो,
अब रही चलता-फिरता
नज़र आने की बात
तो भाई, तू चले तभी तो चलू मै
तू तो भगत धूजी बना बैठा है
उचका कर अपनी पीठ पर
नही ही लाद पाऊँ, बैठा रह भले
पर मेरी एक बात ठीक से जानले—
जब तक मै सामने हू न तेरे
न कोई विष्णु टूठने[1] वाला
और न ही तेरी सरसुत मैया रीझने वाली

1 प्रसन्न

पर कितने लम्बे रन-वे पर सरपटे,
तू भी अपनी पगपट्टी देख
कान करीब ला
दूसरा सुन लेगा तो
निरा मक्खू कह बैठेगा
और जो उससे ही पूछ लिया मायना
'तुझ जैसा लेखक'
कहता-कहता दुर' लेगा वह,
यहा यह भी समझले
किसी के उठाये नहीं उठता मै
अपने से ही उठू
जाऊ भी तेरे ही भीतर मगर
खाली पीपे-सा नहीं
इस अछोर मे से चुग-बीनता,
इसके चलते ही तो
सफेद पर काळा किया करे है तू,

थोड़ी सास तो खा ले बोलानदी
बोले ही जाए बक्कर-वक्कर
फिर भी झाग नही आए
अच्छा यह तो बता
सफेद पर काला या नीला-हरा
कैसे मडता है, जाने है क्या
अरे मुझ से पूछ मुझ से
लिखने से पहले
क्या-क्या घटाटोप नही होता भीतर
तड़ाछ-तड़ाछ पड़ते

एक-एक शब्द के पीछे
दड़बे-दड़बे दोड़ना पड़ता ह,
बिना आहट किए ही
सरक जाए समय
फिर भी बटोरा करू
मुट्ठी भर-भर सीपिया,

वक्र हा भाई, तेरा भेजा तो
छोळो पर छोळे खाता हिन्द महासागर
फिर क्यो न रहे तेरे पास
मोतियो से अट-अट सीपियो का
सालाजारी अजबघर,
पर समय
तेरा माहवारी चोपदार थोड़े
जो खड़ा रहे बल्लम थामे
तेरे दरवाजे पर,
कॉपी-पिनसल है क्या तेरे पास
तब लिख– समय के आखे नही होती
वह तो चलता है बस, चलता है
उसके पाव भी अदीठ
मनु-जाया ही देखा करे उसे
जिसने नही देखा उसे
मान लो, गया बारह के भाव,
अगोचर काळबेलिये को
पूठ दी सजय जननी ने
देखनी पड़ी उनको
मामा के हाथो सजाई
देवकीनदन की जनम-कोठड़ी
यह तो रही तेरे-मेरे जमाने की बात ,

अष्टावक्र

कहा से कहा
छलाग मार लेता है तू
मैने तो जानना चाहा
मन के बीमार को
और तू बखाने भूगोल
तो कभी इस-उस का इतिहास,
यू प्राण मत पी मेरे
किस जनम का वैर निकाले है
अरे इन दोनो को तो स्कूल मे ही
फर्रुखाबादी लहजे मे कह दिया था–
'थारै लाम्बा जोडू हाथ
पगलिया लेले रे '
मेरे टोले वालो ने तो
गायत्री मत्र-सा गोख लिया था इसे
फिर एक सयानेजी ने दोहा थमा दिया–
हिस्ट्री-जुगराफी निरी बेवफा ।
रात भर रटो, सुबह होते सफा ।'

"ठहरो अष्टावक्र! अब तुम नहीं, कुछ क्षण
मुझे भी बोलने दो, बहुत बोल लिए तुम,
फिर मे तुमको-इसको कब तक सुनता रहूँ
सुनते-सुनते कह पड़ने का आवेग भी तो उठे ही
निर्बंध आवेग कैसे थमता है, यह तुम खूब जानते हो
तुम जो आशुवाणी का कलश हुए
झरे ही जा रहे हो न इस पर, मुझे लगे
यह लेखक नही, जीवित सालिगराम है ।"

दूर-दूर तक के बाहर को
देखने-समझने फिर चलते रहने की
जुगत पर जुगत बताऊ
और आप मुझे टोकने पर उतारू,
यह क्या बात हुई, फिर आप ?

"मै जानता हू अष्टावक्र! तेरे सोच मे, तेरे व्यवहार मे
सूत-भर की टोक को भी जगह नही,
तुम अपने युग के प्रश्नो का महोपनिषद्,
उत्तर किसी का कही से भी पहुँचे तुम तक
तुम उस पर प्रश्न अँटेच कर फेरना कभी नही भूलते,
इसका अर्थ न अपने थिसारस का प्रदर्शन और न ही
दूसरे को अपनी तराजू पर तोलना,
यह तो तुम्हारे होते रहने की अहम अनिवार्यता है
शरीर को बनाए रखने की प्रक्रिया मे
कद-काठीदार होती हुई आख ही बताती है पहली जरूरत,
फिर तेरे तो हर-हर उत्तर मे ही
सटे रहते है एक से अधिक क्यो और जो
जूझने के अभ्यस्त नहीं होते, वे क्यो का
बीज ही नहीं पड़ने देते अपने भीतर, ऐसो को पूरब से
आता दिखे प्रश्न तो वे पश्चिममुख ही, फिर
प्रतिउत्तर पर भी तो तुम अविराम जिज्ञासु, ऐसा
जिज्ञासु तो खुद ही बनाया करता है अपनी
नियति-- सवरने-बिगड़ने के अनुमान तक से परे
सही कह रहा हू न मै "

अष्टावक्र हा कह तो ठीक ही रहे है
पर यह जो बैठा है यू
है तो मेरा ही मै,
ऐसे ही छोड़ दू इसे

तब क्या गत बनेगी
यह तो मै जानू श्री
आप अपना नाम तो बताए ,

"हा, इसकी गत मनसा-वाचा-कर्मणा तो तुम्हे
ही भोगनी है, मनसा तो मै भी भोगूगा ही,
यह भी इसलिए कि अपने समय के तीन
निराकार रूपो मगर वाक्-सृष्टि मे निग्गर सिद्ध
को सुबह-शाम की आरती उतारनी या फिर
निरी निपटता और बिना सीढी के शिखर को
आदि-अन्त मानने वालो की इहलोकी लीलाओ
के साथ अस्थियो तक के परिणाम
मुझसे कभी ओझल नही रहे,

मुझे डर है, अपने सोच से परे की
एक भी घटना देखली, सम्भव है, लुबडुब
ही बद हो जाए इसकी, अच्छा तो
यह रहे, मेरा कहा बाराखड़ी की तरह समझादे इसे,"

अष्टावक्र लगते तो आप सजीदा ही
पर है तो इस पल तक
निरे अजनबी ही
जात-गोत की पूछ-गछ तो
आती ही नही मेरी जुबान पर
पर सवाद के पेटे
नाम-सम्बोधन की
जरूरत तो पड़े ही
अब आप जैसे आर्यपुरुष को
अरे ओ, अजी सुनिये, कैसे कहूँ,
खाया ही नहीं मैने ऐसा आटा

इसने तो उड कर वहा पहुॅचने की
मशक्कत की पर मात खा गया
रन-वे पर लाल बत्ती से तो
अपन बैठे, उड़ता ही कैसे ?
एक बात और कहू दादू!
इसे आप ऐसा भोदू भी न समझे
अब तो यह चाबी
उचकने की फिराक मे है
मिले, जा घुसे अपने दडबे मे
जड़ ले दरवाजे पर अलीगढी
और समझ ले, पिण्ड छूटा
गले आ पडे पजे से ,

छपास-लिखास के कई-कई
दोमालो-चौमालो मे भी
खूब मटरगश्ती की है इसने
मगर मा-जाया एक ही बजरबट्टू
अपने ही खीसो मे
हाथ खोसे गिनता रहा
जाने गिन्नियां औधा कर ही
निकला अपनी हवेली से
हवेली हवा और अगुलिया जेब-पार
अब इसे आप देखो ही हो
सूखा टिंडा जिसे मै फोफळिया[1] कहू,

अब भी उतार ले समझ पर पहनी नकाब
चानणे-सा दिख जाए यह पगा तो
रेत मे पानी का छलावा
मगर आप भरोसा रखे मुझ पर

1 सूखी सब्जी

जाने ही नहीं दू इसे 'कोमा' मे
अव तो अपना ,

''तुमको भी अपना नाम वताऊँ वाह, अष्टावक्र वाह'
और कितने वातो के स्वाग रचाओगे अपने इस
मै की खातिर, तुम न करो, लो, मै ही किए
देता हू इस एक अकीय प्रहसन का पटाक्षेप ,

झिझोड़ो अपने इस मै को, सुन तो ले ही मेरा
नाम, जान भी ले, तेरा-मेरा चरेवेति-चरैवेति

मै अ-पाताली इस अन्तरिक्ष की साक्षी मे अब तक
की एकमात्र अर्बुदाक्षी वाग्मी-सृष्टि, भूल गया
होगा तुम्हारा यह मै कव की पढी सस्कृत, सुनवादे
इसे यह खडी बोली- समूचे ब्रह्माण्ड मे
उजड-उजड़ कर बसता इकलौता बोलता हुआ कामेती[1] ससार

मै, विषुवत-भूमध्य-उत्तर-दक्षिण ध्रुवो के हर-हर
अक्षाश पर अपने पाव छापू, मै, हड़प्पा-फराहो,
ट्यूबरेल की सभ्यताए रचू, रचता ही जाऊ निरीह
सा देखता रहूँ देखता रहू और यू जब उकताने लगू
नाजिम-हिकमत-पाब्लो नेरुदा' आदि विद्रोही-
चेग्वेवारा की सस्कृतिया रच दू! मुच-मुच जाए मेरी
इन भूगोलिया वाथो[2] मे नगर महानगर

इसको, हा तुम्हारे इसको 'अ' से 'ज्ञ सिखाना
माफ करना, थोड़ा ताव खाकर ही कहा तुम अपनी
बातो के पेटे इसे चाकवद चलारू ही बनाना
चाहते हो न तब पहले इसे 'पचतत्र' मे यू फिराओ—

1 कामगार 2 बाहे

चकवी ने चकवे से कहा— 'कह रे चकवा बात,
कटे अधेरी रात ,' 'बोल मेरी बार्यी भुजा—
घर मे बीते वो-वो कथू या जो जग मे बीते '
'घर की घट्टी मे तो पडे काकरा रोज, हू दळ दू[1]
तू चावे, चढे आफरो[2] दोनो को ही, जग बीती
सुण-समझ्या हुवे चानणो ओरै[3]-आगण '
'भली करै, आज रै लोकराज रा श्री-श्री रिछपाळ[4] ,''

अष्टावक्र बस दादू, बस, अब आप बैठो
और देखते जाओ कैसे लाता हू
इस कम-बोलू बेसी सून-देखू को चौभाटे[5] पर

मै इस भरम मे मत रह
तेरे कहे का टेरिया[6] नही बनने वाला मै,
देख लिया तुझको
और तेरे इस बड़केजी[7] को भी
क्या रखा है पोथे फरोळने-सीखने मे
मै तो अब रचू बस रचू

मेरा अष्टावक्र हाSS हाSS आखे मूदे
टाचो पर टाचे मारे ही है कागज पर
और देखे है बस वो सून
बाहर पर तो चम-चम-झप-झप ही
अरे सलेटी चश्मा उतार फिर देख
वोल्गा से गगा' के
इक्कीस थोक[8] मे ही
बाच कर रख दिया 'घुमक्कड़ शास्त्री' ने
तेरा-मेरा अतीत-इतिहास

---

1 पीसना 2 अधिक खाने से होती बेचैनी 3 भीतर 4 रक्षा करने वाले 5 चौराहे पर 6 पिछलग्गू, 7 बडेरा 8 कथन

आज तक खुभे पाञ्चजन्नियो' को
उत्तर-पडूत्तर तो किस कूची से फेरे
महापडित का अनाचार'
कह कर ही अगूठा चूसे,

ले, पढ 'राघवाचारी' को
उम्र के चालीस गिनते-गिनते ही
खड़ी कर गया यह
अरावली-सी 'महागाथा'
आखर नही बळ-बळते खीरे
मै— जावाल, मेरी मा, मेरा बाप— जाबाल
जात-गोत— जाबाल,
बोल गुरु! पढने वैदू या नही '
पसीना भी नहीं पोछ पाया दढियल,
थमा थोड़े वह दाक्षणात्य
सुलगाता ही गया सास पर सास फूकता
ले, यह भी ताप—
फिर बैठ गया हू स्वाहा-स्वाहा करने
मरेगा ही कोई बामन,
निकाल मर्यादा पुरुषोत्तम राम
अपने तरकश से तीर
रू-ब-रू मै, शम्बूक ,

तू तो सूरदास बना ही
परमानद लेना चाहता है न
तब तुझ परमसुख- भूखे को दिखे ही कैसे
एशियान-निरोलक रग मे
भगवतशरण-चट्टोपाध्याय-कोशाम्बी
राजवाड़े-रजनीकान्त के दस्तखत
फिर पर्व - अक्करमासी-

अपने-अपने राम' की छाया से ही
भागता रहा है तू,

हा, तो आज तक के
आधे भरे पन्ने तक आते-आते
वैशाख-जेठ-मासी थारिया[1] मै
गुलाबजल से नहा गया रे
मन हो गया बीकानेरी सावन
छाछ-राबड़ी[2] से छका
पिद्दी से पेट पर हाथ फिराऊँ--
बार-बार फड़-फड़ते महापोथे मे
नाम नही दिखा तो
इद्दू-फिद्दू-पीरू तागे वाले का,
धापी रगारी- हसना पिजारिन का,
न घोटिये सलावटे का घ
न ही ठठेरे किसने का ठ,
मुझ जैसे जनमजात
बोलारू-देखारू का तो
यही परमानद-ब्रह्मानद!
एक चुल्लू तू भी चख प्यारे ,

मै

बद कर अपनी बातो की मिक्सी
चलाये ही जाए है किर्र-किर्र
चक्करघिन्नी हो गया मै तो
बिजली बोर्ड मे
खास पैठ है क्या तेरी
होती ही नहीं लोड शेडिंग
भाई मेरे शैडो बाईसवीं सदी मे
मुझ इक्कीसिये सईके[3] का

1 थार रेगिस्तान का रहने वाला 2 मट्ठा और आटे मे पका तरल खाद्य 3 शताब्दी

कोई-सा भी चैनल खोल—
कही परभाती-भीमपलासी
तो माइकल जैक्सन-मॉड-पाप,
तोड़ी-बिलावल को लताड़ता याऽऽ हूऽऽ
विश्वसुन्दरी का उदघोष,
और तू है कि कोरी डिंगल उगले,
इस आवड़-तावड़ के सिवा
और भी कुछ जानता है कि नहीं ,

मेरा अष्टावक्र तैश-ताव तो मुझे
तुझ से अधिक ही आता है
आबड़-ताबड़ क्या होता है
बाद मे ही पता चलेगा
मै क्या जानू और क्या नही
यह बता दू तुझे, मुझे तो मुझे
औरो को भी सरपट भागता दिखे
अभी तो मै तेरा आगल-पीछल

मै हो-हो हँसने लगू मै
ऐसी अकड़-फू पर,
पेट पर पड़ते बळ थामता कहूँ—
क्या नाम बताया तूने अपना
अस्ट वस्ट वक्कर
साऽऽलाऽऽ नाम न धाम ,
बैठ गया है मुझे समझाने

हा तो सयानेजी, कहे तो तू खुद को
मेरा असल सस्करण
पर यह कद' यह काठी
मेरी को तो परे ही रखू

फील-पाव होकर न लौटे तो
फिट कह देना मुझे,
मेरा नाम बोलना
तेरे बस की बात नहीं
तू तो मुझे- बातेरी-
कह कर ही काम चलाया कर,

तू भले मुझ से आखे चुराता रह
पर मै तुझ पर से
अपनी टकटकी कैसे छोडू
और जे हटा लू तोSS तोSS
तेरा क्या होगा रे सूनिये
यह तू थोड़े ही जाने
यह तो मै जानू मै, सुन मक्कू-
जो अपने भीतर को
बाहर निकाल कर न देखे, दिखाये
वह असल मै नही
सच्चा बातेरी नही
भरम की अबरख
तूने लेप रखी है, मैने नही
ककड-गळगचिये लगे है न तुझे
मेरा यू बोलते रहना
है तेरे पास तो ला
एक भी कारण का चूना-सिरमट
दे थपाच मेरे मुँह पर
सुन, मोगानाथ, जब भी भीतर का मै
बाहर आकर बोले
बत्तीसी बद हो जाए तीसमारखाओ की
तू है किस गिनती मे
फिर मै तो वद करवाने ही बैठा हूँ

अपने आप से तेरी यह बोलती,

वड़ा भाई कह गया न मुझे
'पचततर-किस्सा तोता मैना' मे
टहलवाया करू तुझे
ये सारे रूपक आदमनामा के,
सुन मुझसे बातेरी-पुराण के
कुछ पुच्छल, कुछ तोड़े
पूरे-पूरे सुना दू तो
तुझ-सा पोगा समझ ही बैठे
भागोत सुन ली आज,
दड़बे मे ही नहा लिया गगा
ऐसा पुण्य मैने न किया, न ही करू,

पलाथी लगा ढब्बू
और परे फेक यह रूई
भूल से भी जो छूजली
प्रलापता रहेगा आखी उमर
तब भी तो गाज
तुझ पर थोड़े, गिरेगी मुझ पर
बिवाइया फट आएगी
तेरी खातिर दर-दर मागते,
तू काग्रेस का केसरी-अन्तुले या
भूगोलीय निगम का ईश्यू तो है नही
जो सुबह जारी, शाम से पहले फुल,
'न्यायतीर्थ'[1] लिख गए
आचार्यजी ने भी हाथ जोड़ दिए थे
गगाराम को असाइलम
सॉरी यार, यह शब्द

1 श्रीगोपाल आचार्य का उपन्यास

तेरे माथा-पीडिया मे शायद ही हो
मेरा मतलब   मेरा मतलब
आगरा से है रे
पुराने वाले से नहीं, मै इधर वाले शहर
जहा शर्माजी ने भाषा-आलोचना के
खम्भे पर खम्भे उठाये,
रागेय राघव ने
किताबो का आगन बनाया
यादव क्यो पीछे रहते
कागज की सीढिया चढते-चढते ही हो गए
नई कहानी के तिकोण
इस पर अब तक भी क्यो न उड़े
ठाकुर भाई के ठहाके ,

मै   दो टप्पो मे बात
कहना तो तुझे आता ही नहीं
हा, आगरा की बात भली कही तूने
सुन बातेरी, मैने बम्बई-जयपुर-कलकत्ता
तो खूब-खूब छाने
पर आगरा और पहाड़ की
छाया भी नहीं छींप[1] पाया इस दिन तक
हा, सपने मे कई-कई बार देख लेता हूँ-
दूध जैसा ताजमहल।
बादलो को टोकते पर्वत।
जाने की जब भी सोचू
आ खड़ी होती है भूतनी कड़की
कोई ऐसी जुगत बिठा
दोनो साथ ही चले आगरा
पर देख, पूरनमासी का टिकिट

1 छूना

हर्गिज-हर्गिज मत कटवाइयो, हाSS
बड़ा वावेला मचे उस शाम वहा
लकदक कपड़ो मे लदे
गध फुहराते लोग-लुगाइया
ताज को कम खुद को बेसी
देखते-दिखाते ही फिरते है
अपन तो अमावस को ही पहुँचे वहा
निरा एकान्त   हवा मे तैरती वह
मै उसे देखू   सुनू   सूघू   ,

मेरा अष्टावक्र   सिर झकाझक
मगर भेजे मे तो फोटाई
अरे ग्यासाराम[1] आगरा मे
ताजमहल तो है ही
वहा जगी अस्पताल भी है,
नहीं आया न समझ मे
तब चुप रह
सुन, बातेरी-कथा का पुच्छल,

तू भले हो लेना निहाल
पर मै क्या होऊँ
दो-तीन तोड़े बोल कर,
अरे बातेरियो के टीपणे तो
पाटे पर बैठा-बैठा
बाचा करता था मेरा चार्वाकिया बाबा
तिलक-छापे वाले
धोती सम्हाले ही सरकते,
उस बतखोरी के आगे
मेरी यह जीभ पलारनी[1] टींटोड़ी-टालोड़ी[2]

---
1 चलाना 2 छोटे जतु

नाम सुनते ही हो गया चरणाट
क्या छोका है तूने अपनी जिल्दो मे
पूछने से पहले ही ले, बता देता हूँ–
कौन था यह चार्वाक
दो-चारसौ नहीं
कई हजार बरस पहले
सभ्य होते हुए इस ससार मे
पहली बार बोली गई कविता
जजाळिये जिसे कहे 'ईश्वरौ उवाच'
और उसी मे से
फुग्गे फुला-फुला कर उड़ाए
यह रही सुई वो बेतार रॉकेट
जम्बो कम्प्यूटर आगुन बरसक
ऐसे-ऐसे गप्पोड़ियो से
बातो की हथाई करती आई
मेरे बडेरो की एक पलाटून
उनकी आल-औलाद
मेरा बाबा और डाक्टर डोकर
हुआ कि नही मै भी

तू यह मत समझ
यह चारा माफिया-भू-माफिया
चीनी-खान-हथियार काण्ड
आज भर की उपज है
नही चम्पू नही
मेरे इन बडेरो के होने से निरे पहले
नींव डाल दी गई इस अमर बेल की
देख तो, तुझ-मुझ से कित्ती आगे
यह रही ललियम्मा
लगा बैठी इमेल्डा से बाजी

और अब हेSSS हेSSS,
उधर कू आख फेर तो
वह है रे अपनी मुनसीपाल्टी मे
हाजरी बजाता सुक्खू,
जाने कब देख ली भाई ने
ओनासिस की फोटू, बस रीझ गया
छोड़ दिया सकल्प--
बन कर ही रहूगा
अक्खी कुल्लू-मनाली का सुखदास
ऐसे वजनदार को तो
रिक्शे पर रख कर ही लाना पड़ा
हवाई टेसन के पलेटफारम तक,

कहता रहता है न तू
बहुत पोथिया पढी है ,
तब बता, हनुमान चालीसा के सिवा
कोई दूजा चालीसा जो पढा हो
बोल गई न टे
ले, मै बताता हूँ, मैने पढा है
एक हजार कोटि आखरो का
पाटलीपुत्र मार्का लालू चालीसा ,
यह तो हुआ
आज के सरगनाओ का भेख
पर उस जमाने वाले तो तो
कमण्डलिये-दढियल
बैठे-ठाले राजसू-अश्वमेध करवाते-
यह होम स्वाहा वह छोक स्वाहा
हो गई धरती पवित्र
अब यह श्री चक्रवर्ती की
फिर अवतार पर अवतार के धुआ-टोप--

ऐसे धुए खा-खाकर अघाये
उतर आए कई-कई चौगान मे
लगे भित्ति बाधने तापस-गुरुओ की,
ये लोग ही चार्वाकिये कहलाए,
बदस्तूर कायम है, भले छोटी ही
उनकी भी वश-बेल
आज भी टुर्रे उड़ान मे
क्या मजाल जो कोर-कसर छोड़ दे
जब-तब देख लिया करो तुम
वकीलो के घूघटो मे
उत्तर आधुनिक रखवारो को

हा, तो बातेरी कथा का तोड़ा
सुनाने चला था न,
एक निवाला अटक गया गले मे
पानी की घूट के साथ निगलता
तुझे तो बता ही दू
भाई सस्कार एक दिन मे थोड़े छूटे
घटती-बढती छाह जैसे
लगे ही रहे आगे-पीछे
कथा--अ-आ पढकर ही
दीवान हो गए भैरूसिह की हो
या हरिदास पाल-गुलजी जोशी की
शुरू मे तो स्वस्ति ही बाची जाए
अब मेरी स्वस्ति-मगली तो
साच्छात मेरा यह जुग ही--
सो ज्ञान की गगा से तिरिया-मिरिया[1]
मिथिला नगरी मे
नहाने को आ धमके

---

1 भरी हुई

एक गिस्टिये की कथा कहूँ
तो सबसे पैल पछाटे मार कर
बाघम्बरो का मैल उतारते
चौथू धोबी को सूर्यनमस्कार
भला करे वह मेरा, मेरे कुनबे
और तुझ सहित पूरे आसपास का,
फिर मथेरवन्नामि
भीखू कुली - लालू मजूर - मागू मोची को
और एक साथ पाच दण्डौत
तीन बेर मे ही
नौ बेटियो की महामाता
पीरजी की पत्नी को।
तो सुन लेखकचद—
वहा का राजा था जनक
चोटी से एडी तक बातो का रसिया
हर तापस-याचक को न्यौता करता
उठवाता रहता बातो के भतूळिये[1]
विन बुलाये ही आ पहुँचते कई
चपर-चपर का अलाव जलाने,
गूगादास-तिरपुडिये होते ही
मुण्डिया हिलाते - दाढिया फरफराते
धन-खुरचणखोर तो बस नारे लगाते
राजा जनक की जय।
ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या।
उस अरूपाकार ने रचे है
यह रूप   वो रूप   येSSSये, वेSS वेSS
राजा विदेह की जय।
नाम तो जनक
पर चमचे कहे विदेह

---
1 वर्तुल

फिर भी बैठे सिंहासन पर
धन-धन आर्यावर्ते जम्बूद्वीपे ,

बातो की हवाखोरी
कही भी हुई, कही भी हो
चाल-झुग्गी वालो की क्या निस्वत
वे तो सूरज-मुख
लाल कबूतर हैSSसा-हैSSसा ही करे,
अधेरा होते-होते
खाली कनस्तर मे जस-तस ठूस
हम-रूप घड़ने का परमसुख लेकर
खर्राए कुकड़ू-कू तक ,

चूजा मुर्गे का हो
या फिर आदमी का
अपने समय का कद तो नापे ही,
सुबह-शाम देखे
हाडी-थाली मे होती गुत्थम-गुत्थी
और खा जाए ताव
बातो की टहलकदमी
और पिट-पिटते ढिंढोरो पर

ऐसे ही खुन्नस खा गया
झूपाबास का ग्यारसिया[1] अष्टावक्र
कान झाड़-झूड़ता
आन पहुँचा जनकराज की सभा मे
याद है न तुझे अष्टावक्र का अर्थ
तो नाक-नाक ब्रह्मलीन
प्रचण्ड विद्याधरो ने

---

1 नाटा

फाक-फाक आखो से देखा-
आचा-ताणा और राजसभा मे!
प्रणाम नही   साष्टाग नहीं
तिस पर भी घूरे! घूरे ही जाए!!
भड़-भड़   भडाक-भड़ाक फूटे
ठहाको के हाडे-ठीकरे
नवला ढचक दू पीछे क्यो रहता भला
दस बिसवा बेसी ही
कइयो को तो राजसभा की
छत ही डोलती-सी लगी
फिर तो साप सूघ गया
ज्ञान-विज्ञान प्यासो को
आर्यपुरुष विदेह ने ही टनटनाई
गले वाली गुरु-गम्भीर घटी–
"तुझे देख कर
ये गुणाढ्य तपोधन हसे
इनके हँसने का कारण तो
मै जान गया ऋषिकुमार
मगर तुम किस   किस सबब हँसे
यह तो बताओ   ?"

अष्टावक्र की तो जीभ ही सात बिलात[1]
छोळ की झपाट से जैसे बाध टूटे–
"तेरे इस किस सबब का उत्तर तो
बाद मे दूगा, राजा विदेह!
पहले तुम या तेरे ये मार्तण्डिये बताए
तुम सहित ये सारे
सत्य के शोधार्थी है या मोची
वही देखता है न खुर्दबीन से चमड़े को

1 एक नाप

और भाष्य करू क्या
अपने इस कथन का राजाजी? '
सुन रहे हो न मेरे समग्रजी।
बत्तीसी चिपक गई राजसभा की
मुकुटधारी माथा भी
झुका-झुका खिसक लिया
और रहा ही वहा कौन
जो कहोड़-जाया ठहरता वहा ,

अगले ब्रह्म मुहूर्त ही
'सावधान पधार रहे है' के
उदघोष बिना
राजा अष्टावक्र की झुग्गी मे
आठो अग-पुट जिज्ञासु--
और अष्टावक्र
राजा के एक पर दस हाथपाई लगाए
वह अरूप के बावळिये[1] बिखेरे
तो बावनिया अपनी जीभ-पलारनी से
बना दे सीधी पगडडी और पूछ भी ले
चला जा सकता है न
इस पर से आगे और आगे ।

"यह सही राजा
निरे अरूप-से लगते
इस ससरण से ही बनते है
ये रूप वह रूप
मगर अरूप न देखता है
और न ही बोलता है
रूप ही रूपायित करता अरूप को

1 काटा

तेरे और मेरे
और इस सम्पूर्ण चराचर जगत के
सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप मे ही
निहित है ब्रह्म
रूप मे ही मुक्ति है रूप की
फिर विदेह क्या है कैसा है कहा है
तुम हो तब बोलो' बोलो न ।''

राजा के पीछे
भोजपत्तरिये बैठे ही थे
कॉमा, डेस डॉट-डॉट टीपते बोले–
यह हुई 'अष्टावक्र महागीता' ,

झपकी आ गई क्या ग्रथजी–
कई शास्त्रियो-महामहोपाध्यायो को
तुम भी अच्छी तरह जानते हो
जाओ तो उनके पास
ला, दिखाओ मुझे
विदेहजी का एक भी आखर बोल
तुर्रमखा नही, दूजा सुकरात
दूजा मैक्समूलर कहने लगू तुझे,

मै

न मै भेड़-बकरी
और न ही तू गड़रिया
कि टिच-टिच-टुर-टुर सुनते ही चल दू
काशी-इलाहाबाद,
भडारकर के पुणे या सातवलेकर की पर्डी
तेरे कहे, पहले सीखू महीनतर अग्रेजी
फिर उतर जाऊ 'सेकरेड बुक्स ऑफ द ईस्ट' की
गहरी गुफा मे और खो जाऊँ

यही चाहता है न तू
ना बाबा ना, नही लेना मुझे
'दूजा सुकरात-मूलर का सरोपा'
अपना उधड़ा सी लू, यह बहुत,

पर एक बात सुन
भले मैने नाखूनो की चिमटी से
उखाड़ फैका उसे
मगर एक बार तो गड़ ही गया मुझ मे
तेरी बात से निकला काटा
कद से बावनिया
और बोल गया राजा से तू-तड़ाक।
भई वाहSSS वाहSSS वाह रे बोलारे।

मेरा अष्टावक्र

अबे ओSSS बद कर अपना
यह वाह-वाह का बाजा।
बज्र किसे कहते है, जानता है क्या?
नहीं न, तब सुन, बज्रमूरख वह
जिसे अभी-अभी घटा भी याद न रहे,
सुबह ही तो पूछा था तुझसे
रात क्या-क्या खाया था
मरोड़ता रह गया अगुलिया
अरे तुझ घिसाटिये से
लाख बड़ा बॉरीस्टर
बातो का भट्टाचारजी गुलजी
एक बार देख ले जिसे
सात पुश्ते बखान दे उसकी
बता तो किस-किस को हड़काया तूने?
कितने पर्दे उघाड़े फाड़े?
कितने इच घिसे फुटपाथ?

खोहजीवी कही का
अपने पूरवले[1] का प भी नही जानता
तव क्या रचेगा आगोतर[2]
भाय-भायती इस खोह से
तुझे वाहर निकालते मै भी थक-थक जाऊँ
और सोचने लगू
तुझ मूढमती से माथा मारना छोड़
भाषा-विज्ञानीजी के फ्लेट पर लगा
वटन जा टीपू,
असमय की घनघनाट पर
ताव खाया-सा उठे
और काच जड़े छेद मे से देखते ही
'आईये आईये खीसे निपोर दे–
आज तो कुछ नया लाए ही है '
मगर मै तो खाली कटोरी
दो-चार शब्द ही मागू
तीर से धरती फोड कर बुझाई थी न
अर्जुन ने पितामह की प्यास
वैसे ही एक ही पैग यशेषणा से छक गया
मनीषी व्याकरणाचार्य,
उससे माग लाए हरफो को
अपनी आवाज की पिस्तोल मे भरकर
दन से दागू-
बिना धोक दिये सुन जड़भरत
अपने ही पुराण का बित्ता-भर
यू पड़ जाए शायद
अक्ल का एक ही बीज
तेरे इस गुमेज थार मे
न उगे गोभी-परवल

1 अतीत 2 भविष्य

पालक-चदलाई ही फूट आए,
सुन, खुद से फकत
एक पीढी पहले का आखिरी अध्याय—
तेरा, हा तेरा ही बाप
अकड़ लिया था एक दिन
अपने समय के मुच्छल राजे से
उसे बिना धरे[1] ही
अबाउटर्न हो गया था रिसाला ,

ना, ना, फूल कर कुप्पा मत हो
अपने बाप के ऐसे करम पर,
तूने सुने हैं क्या कभी
अपने आप पर रीझते बोल
भगतिभावी जनता तो रीझती ही
मैने सुने रे, आज तू भी सुन—
"मेरे तो गिरधर गोपाल
दूसरो न कोई "
बाबा बाकेदास कब चूकने वाले
खुसफुसा दिया मेरे कानो मे-
"तन्त्रीनाद, कवित्तरस सरस राग रति रग
अनबूड़े बूढे, बूड़े, तिरे सै
फिर तो मैने भी
कई-कई डूबते-तिरते देखे

विष्णु-विष्णु की चादर ओढकर
स्वरो की बैतरणी मे ही
उतरना था तेरे पिताश्री को
तब फिर तुझे घड़ने की बळत[2] क्यो पोपी?
अब तू है तो कौन धन-धन

1 गिरफ्तार 2 जरूरत

और जे न भी प्रगटा होता
क्या धरती ओछी पड़ जाती ,?

नहीं तो फिर बता, तुझ-मुझ जैसे
सुबह-शाम के उलझे माझे
सुलझाते-सुलझाते
हाथ तो हाथ, मन तक पर
रग्गे खा जाने वाले
क्यो धोकें ऐसो-ऐसो को?
तू ठहरा सस्कृत वाला
तू धोक श्री श्री १०८
मै निरा उजड़,
मेरा तो दूर से ही नमो-नमो।
सही, वे तेरे पिता
पर काम तो रासनकार्ड, वोटरलिस्ट,
या फिर पक्की बेचवान मे
'सन ऑफ श्री ' भर को ही आए,
बादाम के तेल से तर रखते थे
सन्यासीजी अपनी गौराग देह
वह तो भला आया
पचनद से 'यार की मौज'
बात के एक झाड़े पर ही
उतरवा ली मलमल,
मखमलिया चड्डी,
सरकवा दी कोठी-ब्यूक
फुकवा दिए तबले-बाजे,
तेरा बाप राजा से अकड़ा-भर ही तो
अरे, वह ओलिया तो
गजनेरी झील मे
डाई लगाने का महाअपराध कर बैठा,

हटर पर हटर सड़काता
सिपाही हाफ मरा
राजा ही उतर आया साटका लिये
झनझना गया एक आलाप
'अगला राजा कौन होगा
जानता है क्या रे ?

और 'यार की मौज' वह जा
वह जा शोर के समदर मे,

मै भई वाह, तू तो मुझ से भी अधिक जाने
मेरे वश के बारे मे,
तू वही-भाट है क्या?
अच्छा, यह तो बता
इधर का उधर का
यहा का भी, वहा का भी
कैसे जान लिया करता है तू?
मै तो अब तक
अपने-भर को ही जानने मे
छाछ-पानी हुए जा रहा हूँ

मेरा अष्टावक्र हा हा हकला-हकला कर भी
बोल तो सही,
यही जानना चाहता है न
कैसे बोल लिया करता हूँ,
सच बात तो यह है भाई
कि तेरी समझ के पहले दिन से
इस क्षण तक यह चाहूँ
ऐसे ही नीम-चोल

बोला करे तू, बोलता ही जाए
तमोलो-अन्त पुरो के ही नहीं
साउड-प्रूफ बिलो के दरवाजे भी
भडाक-भड़ाक खुलने लगे,
बाये बाजू का सगी हो जाए
निपट नगा यह जनपथ,

एक बार तो उघाड़ भीतर वाली
मिलान कर देख
गए कल का आज से तलपट—
तू तो भुतहा हवेली मे जन्मा था न,
खीनखाफिया, तोड़ाधारी
गीता-गोखू के साथ
पोछे वाला भी रह लिया तू
फिर अखण्ड कीर्तनिये शहर के
कुल जमा ढाई 'रायवादियो' ने
कैसे अटका लिया तुझे अपनी ओर?
फिर तूने अरघे-तामड़े
जनेऊ-तिलक-चोटी
खूटीश्री को अर्पण करने भी देर नहीं की,
हाय-हाय, मुर्दाबाद-जिन्दाबाद करते
'बड़े घर' भी हो आया,
अब तो तू 'मीराश्री-राहुल-बिहारीश्री ’
जाने कैसे-कैसे
माळीपाने चिपक गए तुझ पर
इस पर भी तू
'उड़ि जहाज को पछी पाछो ’,

अरे मै गरुड़ पुराण थोड़े बाचू
जो माथा नवे बार-बार

यह तो मै हू मै
तेरे ही भीतर का मै
तोड़ फैक गले मे बाधी
अपने आप से बोलने की यह कठी
और गूजता सा उगेर
'नष्टोमोह स्मृतिर्लध्वा
त्वत प्रसादान्मयाच्युत
स्थितोस्मि गतसन्देह करिष्ये वचन त्व ,

मै थम बोलारे थम
यह तो तू सस्कृत बोलने लगा
भला मै कैसे समझू इसे
कभी-कभार पढनी पड़ जाए न
झुरझुरी छूटे झुरझुरी,
कहदे-कहदे-- यह कोई
खरोष्ठी-ब्राह्मी लिपि मे थोड़े है
शुद्ध नागर अक्षर
या कि केरल का एक गाव तो
सस्कृत ही खाये-पिये
इसे ही ओढे-बिछाये
पर मै क्यो खपू यू?
वो है न मेरे कॉमरेड ई एम एस
उनके एक बीरे के घर मे तो
आदि नम्बूतिरी का जगाया 'जगरा'
आज तक जले
पर झींखे तो है रोज
घी-तिल नहीं पोसावे, नहीं पोसावे
तो भाई अबूझ तो मत बूझ,

मेरा अष्टावक्र देख लिखा रे, पहले भी तुझसे कहा

फिर कहू, नाक काट ले
पर बात मत काट
मै जो बोलू अबूझ लगे तुझे
फिर तेरे-मेरे देश के
आज के ये राव-राजा
जो बोले-लिखे
हम सौ करोड़ की जमात
समझते है क्या?
झागो-झाग हो रहे है 'लोग जुम्बिश-
इदारा-दिशा-दिगन्तर
लिखना सीखो   पढना सीखो
रहे न कोई एक अगूठा टेक
कितने कटे, कितने साबुत रहे
गिने क्या कभी   हा याद आया

वातायनी हवा से
घर ठडा हुआ या नहीं, मै क्या कहू
हा, तेरा फूला हुआ पेट
डा डोकर को दिख गया–
अरे, यह आफरा तो तुझे फटाक कर देगा
ले आए तुझे समिति चिकित्सा केन्द्र मे
ले यह 'झाझरको'[1] की पुड़िया
गट-गट पी जा ''सिघश्री'' से,

फिर तो तू भी बन गया वैद्य
यू किया करो 'रेत को खेत'
परे रखो दूध को 'काचर के बीज' से
और देखता फिरा गाव-गाव

---

1 प्रभात से पहले ग्रामीण क्षेत्र का दीवार समाचार पत्र ग्रामीण क्षेत्र की पत्रिका   किताबों के नाम

'घर बीती रामायण' की नब्ज
दबाओ के ऐसे-ऐसे पुर्जे।
काटो इस बैद्यजी का नाम
बस हकीमाई फेल ,

तभी से बैठा है काटा लिए
सूखी सरसुत के किनारे
फिर भी कैसे आ फसे ये
सुपर्णा वैश्वानर मनसा विजानन?
यहा यह भी सुन ले
अपनी इस छवड़ी मे पड़ी-पड़ी
सड न जाए तो मुझे कहना
दूर से ही गुजरा करेगे
नाक पर रुमाल दबाए
फिर यह 'करिष्ये वचन तव '
मेरा अपना तो कत्तई नही,
यह तो बोलदाज ने बुलवाया
घाबरू कुन्तीजाये से,
अपने ढब का एक ही
हर-हर कौतुकिये से बाजी मारता रहा

राजवशी । मगर जन्मा जेल मे
और पला-पोषा
नदू गूजर के घर मे
क्या पिदाया जसोदा मैया को
सूरदास को सुनना कभी

समझ का फेर देख पोथूजी
दुच-दुच-दुर्र-दुर्र करते-करते ही
दिखाए अपने करतब—

नाग-नथनी तो की ही
चिटूली से बूम रेग
और मुँह से हरफोले मुग्दर
बलदाऊ तो मुळका ही किए
पानी-पानी होती रही भीम की गदा,
किसी की खुले मैदान मे
तो कइयो की भरी सभा मे
झाम बाधता ही रहा

जिस उमर मे तू
गिल्ली-डडा खेलता रहा न
उन दिनो इस माखण-खोरे ने
अपने मामा की पूरी की पूरी
सिडीकेट को ही सल्टा दिया
और वेदो का व्यास करने वाले
परम लिक्खाड़ मुशी
द्वैपायन से भी कह दिया—
लिख, कौरवो-पाण्डवो का महाभारत
मगर दुर्दिन तो मेरे भरतखण्डे के
अरे जिस महाबोलारू ने
अच्छे-अच्छो को तड़ी पार करवाया
उसी को राधेकिसना-राधेकिसना ही
भजे जाए लोग
और मटरू के साथ
मेरी हीरू भोजी तो कान्हा-कान्हा
कहती रोज गीली करे आखे,

भजने वाले भजे उसे
गोखने वाले गोखे उसकी गीता
मगर मै तो उस सावळिये को

घर-समाज-राज के जजाळ का
गुरुघटाल मानकर
इस क्षण तक याद करू उसे,
व्यास का टीपा महाभारत तो
सुना ही है तुमने
जर-जोरू-जमीन की खातिर
लड़ती ही आई है आदमजात
न थमी और न ही थमनेवाली
तो काकीजाये- माजाये
हो गए आमने-सामने
भूआजाये ने कहा मोरपाख वाले से
देख भैये, मेरा यह तागा
तू हाके तो चलू कुरुछेतर मे
और देखलू एक-एक को,

ना रे, सजीदा आदमी
दिन मे सपने नहीं देखता कभी
आख उघाडी, कान खोले रख—
अब जिसने कद्दावर होने तक
टोडिये-गाये ही टुरकाई
उसको अर्जुन का तागा हाकने मे कौन लाज
ले आया मैदान मे,
सामने दादा-काको-भतीजो-पोतो के
कासी से चिल-चिलते चेहरो से
चौनजर होते ही
धोती ढीली हो गई गाण्डीवधारी की
तागे से उतर
गोडे औंध कर बैठ गया धरती पर
द्रोण का पट्टशिष्य,

एक वार तो पूतना-चूस भी हकबक
अरे यह सव्यसाची तो
श्रीगणेश से पहले ही
इतिश्री माडने पर उतारू, तब तब
'पाञ्चजन्य-देवदत्त' मे से
फूक कैसे गूजेगी?
पाचाली की प्रतिज्ञा
अगले ही क्षण वह महताऊ तो
'सशयात्मा विनश्यति ' कह कर
दर्पण हो गया वाक-गुरु
अपने भाई के आगे,
अब टिकटिक घड़ी
न सजय के पास
और न ही पडित व्यास के पास
पर बड़ी देर बहाता रहा
अभिधा-व्यजना-लक्षणा की त्रिवेणी,
सुन रहा है न आज के वाणी-पुत्र!
बळ-बळते खीरो से जलते तो
मैने कइयो को देखा
मगर 'करिष्ये वचन तव- करिष्ये वचन तव
जैसे झरझरकथा से
भीज-भीज कर उठने वाला तो
अकेला इन्द्र-पुत्र ही रहा,

टाक लिए मुशी ने
भोजपत्तर पर एक-एक बोल
और धर दिया देश की आखो के आगे
पूरे अठारह पाठो का गुटका
तुझे कहा फुर्सत
तू तो अपना सरणाटा ही सोधे

मुझ से सुन, मुझसे
पास बुक जितनी इस कितबिया पर
पिद्दी से भरकम तक
होते आए है कमाल पर कमाल–
एक दण्डधारी ने कहा
अकूत ज्ञान है यह
ज्ञान के सिवा कुछ नहीं
अगला गुरु अपनी तुरुप जोड़ने मे
पीछे क्यो रहता भला
नही, यह तो भक्ति का
'न भूतो न भविष्यति दर्शन है,
साठा सो पाठा तो तू भी है
सो जानता ही है
हमारे इस सईके मे
मोल-अनमोल 'वाल्यूम'
जेल मे ही लिखे गए
यहा जैसी फ़ुरसत और मिले भी कहा
देख, मास्टर अवतरमानी को
सकूटर पिचकता चले
सोच सकता है क्या
किरकाट भी था कभी यह
याद तो एक-दो नाम ही आए जैसे
''भारत की खोज
''पुत्री के नाम पिता के पत्र '
हा बापू ने भी निरे पत्रे भरे
उड़ी जा रही थी
गीता-गुटके की बात
देख कैसे झपट ली
एक हुए अपने तिलक महाराज
निरे गरम मिजाज

गोरे ग पर ही किटकिटा जाते
सो लाट जनरल ने पठा दिया
माडले की जेल मे
निपट पराई जगह मे
देश की याद तो आए ही
और किसका स्मरण करते
देशवासियो! वाच लेना "गीता रहस्य'
न ज्ञान, न भक्ति, ना ही योग,
यह तो शुद्धम-शुद्ध
'कर्मयोग' का कारखाना है
अब मै, तू और मेरा यह देश
कैसे-कैसे कर्मणी बने
यह कसौटी तू खुद को ही मान ले,

मै तो छाती बजा-बजा कर कहूँ
है ही नहीं दुनिया की किसी भी भाषा मे
ढाईसौ ग्राम की इस जैसी पोथी—
जिसके भाष्य-टीकाए रखने
आदमी भले धूप पहने,
सपने खाए, रात ओढे,
बनते ही जाए वेयर हाउस पर वेयर हाउस,
मेरा मतलब गोदामो से है रे
मण्डलेश्वरो, अला-फला योगियो
रामसुखो, मुरारी बापुओ का तो
इस कृष्ण-बाणी बिना
दाल-भात ही नहीं सीजे
और तो और 'सर्वपल्ली-ओशो'
जैसे विद्यापति भी नहीं थके
टीपे लगाते— टेप भरवाते
चातुर्मासो मे तो इस गुटके की

वो-वो धोबी-पछाटे कि
"इण्डिया दैट वाज ए वण्डर"[1]
देखने आने वाले भी ऊघने लगे,

तेरा भगति-भाव तो
आकाश से उतरती उस अदेहा से ही
ले परे रख दी जोगियो-गुरुओ की वाते
देश-रूपी इस छकड़े को
कहा से कहा हाक गए
खास घर-बार वाले कोचवानजी को ही देखे
कोचवानजी से मेरा मतलब
वोSS हुए न अपने पहले परधानजी
कोटि-कोटि देवताओ वाली धरती पर
बनवा गए नये तीरथ
युवा-दिल- सम्राट नेहरूजी
वे तक इस गुटके को
सिरहाने रख कर ही सोया करते,
उनसे भला पूछता ही कौन
यू कौन-सा सुख
कैसी मुक्ति मिले पण्डितजी?
मैने तो नही ही सुना
मगर कइयो ने
उनकी मुखारबिद टीप ही बताई—
जब-तब जोम पर जोम
देता रहा उनको यह 'ज्ञान-प्रास'
भगा कर ही दम लिया
सामराजियो को यहा से
तब सम्हाली परधानी
वह भी निरे भारी मन से
मन को तो भारी होना ही था

---

1 ए एल बाशम

कर जो दिया लाट बेटन ने
आदमजात समदर को दो फाड़
फिर नए तीरथ— पाच-पाच बरस की योजनाए
देश के हाथो मे थमाकर
"अब तुम्हारे हवाले वतन साथियो"
कहते-कहते ही बिछा गए
देशज साहबो के लिए
धोळीधप्प चौकिया
देखी है कभी तूने?

ऐसे लाल के हाथो
शिलान्यासित चौकियो को
देश के हर कूट-कोने मे
ग्रिलबद ढालने का पहला साचा यहीं बने
ले देख— बारहा तुड़-मुच कर भी
सदा तन्वगी रहती
इस महिमामयी को
यह कभी चौहानो-तैमूरियो की रही
तो कभी गोरे लाटो की
फिर गरम-नरम दलो के
लाग-शॉट मार्च-
हाय-हाय-मुर्दाबाद-शट-शूट के बाद
हो रही यह नेहरुओ की
पर यह तो हमारा अपना ही
कितनो-कितनो के साथ
कित्ती बार टिकड़ नहीं तोड़े
इसे हमारी हा निखालिश हमारी
सार्वभौम सत्तासम्पन्न राजधानी बनाने,
इस सार्वभौम सत्ता को कहे बिना ही
बनाते रहे है मन्सूबो के किले

कई-कई राज-मिस्त्री—
खबरदार ! पीछे रहो यह हद हमारी !
अपने भिडरावालेजी ने
वो बुर्जिया उठाई कि
हजार-लाख नानक-जायो की
आज तक नसे दुखे ,

इधर देख— बोडो असोम काउसिल
पाटलीपुत्र की गलियो मे
एम सी सी सेना-ब्रिगेड
उधर भी झाक प्यारे—
खालसा इटरनेशनल बब्बर
हिजबुल मुजाहीदीन
इनकी तो हदे ही नहीं दिखे भैया
पड़ोसन आई एस आई तो
घी-शक्कर लिए ही बैठी रहे
हा, ढलान वाले अपने
चदन-राजा वीरप्पन को देख ही ले
ऐसा मलग शूरमा
पाच-सात पट्ठो के बूते पर ही
कब से करे इसे टिल्ली-टिल्ली ,

फिर भी कई अकड़-मकड़ध्वज
यह हमारी यह हमारी
कहते-कहते आए और चलते बने
फिलवक्त यह गर्वीली
दस जमा तीन मिक्सौला वालो की
इनमे भी चला करे
जब-तब कबड्डी का खेल
ले, चल रही डू-डू झपटे भी देख

वह खींचा अपने पाळे मे
बस दो को और खींच लाओ
फिर तो वोSS मारा पापड़ वाले को,
पहले उसने काटी चादी
तब ये पिछड़े क्यो रहे भाई ,

यह रहा इसका 'गोल घर'
अकादमीशियन और सा'ब लोग
इसे ससद भवन कहा करे
इसमे बने राष्ट्रपति प्रधानमत्री
और उसकी केबीनेट
मगर मुझ जैसा जरडू तो
इसे रिमोट-कट्रोल ही कहा करे
यह कैसा होता है, देखा है कभी
नहीं, तब तू यहा रहने लायक नही
बड़ा पर्दा सामने
बटन जेब मे, दबाया, चल पडा सिनेमा
सुना ही ऑफ- हो गया कोरा
और अचानक ही दिखने लगे
धमाकेदार 'शपथ समारोह'
हक्का-बक्का पूरा देश
अब पूछे भी किससे
यह हीरो कहा से आया ?

निहायत सूक्ष्म तत्रो वाली
तकनीक से बना यह रिमोट
चौबीसो क्लाक टिपटिपे
तभी हिले-डुले, जागे-सोये या
बुत ही बना रहे
सौ कोटि का हमारा खटोला,

हर सूबे का अपना सिपहसालार
अपनी-अपनी जमात
मगर चालू-वद का वटन
इसी वणी-ठणी की अगूठी मे,

मे

फिर ऐसे जवरजग रिमोट को
कौन चलाए, कैसे चलाए भाई
'लोड शेडिंग' नहीं होती यहा?
अव तेरी वात काट ही दी है तो
थोड़ी देर कटी भी रहने दे
मै अपने पास वैटरी भी रखू
पर हर दसे-पनरवे दिन
सैल तो भरवाने ही पड़े,
अपने कलकत्ते मे तो
अली-गली-सड़को-तल्ले
और तो और
अपने बुलदजी की गद्दी मे भी
घू-घू जनरेटर देखू
वहा भी तेल डालता रहे पाचा।

इस रिमोट को
पिट्रोल-डीजल-करासन-वैटरी
कौन देता होगा
बाद मे बता देना
पहले असल नाम तो बता।
कही तू 'जिल्ले शुब्हानी गुस्ताप' के
दरबार का वह 'जबरदस्त'
नहीं, वह तो अपने ही बलख मे
हिन्दू व्यास से
तू-तू-मै-मै करता हार बैठा

बातो से तो ऐसा लगे
तू कौरवो-पाण्डवो का काका विदुर
मगर वह तो ओ बी सी होकर भी
फेवीकोल सा चेटा रहा
समझ से भी सूरदास राजा से
फिर तू कही भीष्मदाजी का डायरेक्ट ,

मेरा अष्टावक्र एक टू दाड़ाव[1] तो
तोड़ने के लिए ही टाणा करे क्या
तू मेरे धीरज को
यह कच्चा धागा नहीं प्यारे
ले यह 'वाकमैन'
माग लाया हूँ अपनी काकूची से,

तू तो आस-पास को ही नहीं
कालबोध तक को
झाड़-झूड़ कर बैठे अपनी गद्दी पर
अभी जो-जो भी तूने पूछा
एक-एक हरफ खारिज़
क्यो ले आया करता है
ऐसे सात-मेली पीसान?
मै बीते जुग का
'गुस्ताफ-जरथुस्र नहीं
और न ही मछेरिन पर लट्टू होकर
ठहर गया पाराशरी परिणाम
फिर कलदार साच को
अटी मे खसोट कर
बाजरी की हाजरी वाले
भीष्मदाजी से मेरा क्या लेना-देना?

---

1 रुक

मै जो भी हूँ, जैसा भी हूँ
केवल तेरे आज का मै

हा, रिमोट वाली बात का
भुगतान यह ले—
इसे टपटपाने वाली अगुलिया
चुग-बीन कर हम ही
भेजा करे अपने गाव-खेड़े से
पाच बरस तो कभी दूजे-तीजे ही
एक बार "बार दियो साग मे झोर ही झोर"
कहने वाली मेरी लाडेसर भी
इसमे वह भी इसके 'अपर हाउस' मे,
अचरज देखने का लालची
मै भी लग लिया उसके पीछे
बन गया मेरा भी परमिट,
बकौल भूतपूर्व कवि छोटूखा निर्मल
धरवा लिया गया इधर ही
'मेरा असबाबे-ज़हालत',
फदाक-फदाक सीढिया लाघू
इससे पेश्तर
बाप के नाम बेटी की चिट्ठी नही
ज़ुबानी हिदायतो का खर्रा-
गोया उसका 'अन्नू' ट्रेऊ मै,
सो भाई, जाकर बैठ गया
दर्शक-दीर्घा मे

चिपका ली मुँह पर
श्रावको वाली स्वेलोटेप
बकोध्यानम-सी मुद्रा मे सुनने लगा हूँ-
दाले 10 रु किलो चीनी 7 रु

गेहूँ तो अटा पड़ा है
आलू-प्याज नीचे उतार दिया है '

'दारजी! कितने बरस पहले
देखा था यह सपना
लीजिए दस का नोट
ला बताइए पाव दाल-सब्जी
मत देखो बाजार, चश्मा चढाकर
आकड़े तो पढ लिया करो '
यह फेकान तो 'पापा' जैसी लगी
तभी 'मनमोहना' टसकाए–
'विदेशी वैको ने पिछली छ माही मे
कुछसौ करोड़ बाहर भेजे है
हमे पता चला, कानून मे खामी है
उसे देख देख हटा हटा
एक ओर से मेजे
तो दूजी तरफ 'शेम शेम ' बजे,

चढा तो था नारगी-सा चेहरा लिए
पर निचुड़ा-सा आ उतरा गैलरी मे
पेट-कोटियो-कलपियो के
इस हलू-हलू सरकाव मे
साधू, बाबा, साध्विया, महत भी
मैने तो पहली बार देखा-
बातो के दुर्रे तो चले ही
भारती माई के कर्राटे भी चले
वह भी जिस-तिस पर नहीं
थोड़ी देर को मानलू मेरे भी
देश के गो-लोकवासी ''बापू'' पर
सो भैये, मै तो गैलरी के उस तट ही चला
अब तू बता, जे बापू की आत्मा

उतरी हुई होती यहा
कैसे बच-बच कर चलती?,
उसके किस फार्म हाउस
माफ करना, आश्रम मे जाकर
त्राहि माम त्राहि माम करती?

हिलती-डुलती यह 'भव्य रेल'
खुले दरवाजे मे धसती गई
मै भी यह धस
च च च यह दरबार
अशोक हाल
'नहींSS पापा। यह डाइनिग हाल है
आप यहा बैठे तो '
हरीश भादानी पसीना-पसीना
जेब मे कुबेरजी वाले
कुल जमा तीन कागज
इस अचरज को तो
पेट मे फ्द-फ्द करते चूहे ही चबा गये,
यह डिश वह डिश दही
पुलाव पापड आइसक्रीम
देखने से ही आधी भर गई ओझरी[1]
भीतर ही भीतर
सोच बड़बड़ाये मेरी जेब पर
'मै आया कहता-कहता
बी टी आर अखाड़े का गबरू दढियल काउटर पर
एक पत्ती उधर फिर भी पुर्जे इधर
मै हक-बक सल्लू यह
ओफ्फ-ओ पापा।
यहा यह सब 'सब्सीडाइज्ड है

---

1 पेट

ऐसी गहरी नींद
टूटी भी तो हेSSS आरमीनियन स्ट्रीट मे
मुलायम कवि शकर की दुकान पर
'कागोज' देना तो गप्पू'–
'उदारवाद के चलते
भारत की सकल आमद मे
पाच साई एक बटा चार की बढोतरी ’
-विश्व बैक की रपट,

मै अरे ओSSS एकदम साइजम हो जा
नहीं तो भग लूगा यहा से
साला, इतिहास-भूगोल-सस्कृत बघारता
आ बैठा अको की गणित पर
मन करे झापड़ रसीद दू तुझ पर
सर्दी हो या गर्मी, मेरे घर का तापमान तो
चूरू-बाड़मेर से बाजी लगाया करे
अभी तो जनवरी चले
फिर भी तू मुझे ठडे अतीत से बाळे
ले, पढ जा एक बार १९५२ की
राजस्थान विश्वविद्यालय की रिपोर्ट-
'इस वर्ष पूरे प्रदेश मे
मात्र तीन छात्रो को गणित मे शून्य मिला'
इन तीन मे एक
महामहिम मै ही था प्यारेलाल[1]
वह तो धन-धन ५३ की स्कीम
तीनो गणित सिमट आई
सिर्फ ५० अको मे
रट्टू विशेषज्ञ तो बचपन से ही,

1 अखबार

१९ पर हिप्प-हिप्प हुर्रे करता
जा पहुँचा कॉलेज का चेहरा देखने
और वहा पूरे नौ वर्ष
अई-अइयो अई-अइयो

मेरा अष्टावक्र बद कर अपनी अइयो-अइयो
यह 'सकल उत्पाद'
तूने-मैने तो घड़ा नही
यह तो जबरिया थमाया गया है
ठूस ले इसे सारा देश
अपनी खड़-खड़ चाबी मे
मै नही सटक पाया सो उबाक दिया
फिर मै अकेला ही तो नही
वह भी तो है वोSSS रहा
सारी दुनिया का छुट्टा स्विस खजाची
वही कहे- 'काले भाई!
गरीब यूरोप को
धन्ना भारत का ऐसा उपहार
हमारी मशीन थक मरे
आप से आते नोट गिनते-गिनते '
कैसे गिट पाता यह 'चिकन'
वह तो प्रेस क्लब की पचायत मे
सामने ही बैठा था शास्त्री'
देख लिया झागूटा-झागूटा मुँह
अधूरा ही छोड़ अपना 'पैरेवल'
थमा दी मुझे 'डायजॉन'
तब कहीं बोली फिसली

साहब लाग तो जानते ही है
देश के मदर-घाट का

पुजारी-पण्डा तक जाने–
हम भारतीय ओलम्पिक मे
भले 'मीर न मार' पाए
मगर 'अग्निमीळे से शुरू
पहले 'कविता-दिन' से
"कुरु-कुरु स्वाहा" और
"मुझे चाद चाहिए" जैसे गद्द-दिन तक
बड़े से बड़े विस्तार का
छोटे से छोटा कोड
बनाने मे अव्वल ही रहे है,
अब अन्तहीन विस्तार तो
यह अन्तरिक्ष ही हुआ
समेट कर रख दिया इसे भी
सिर्फ 'अ उ म' मे
लगाया क्या किसी ने भी
आज तक इस पर सवालिया निशान
फिर ससार की बड़ी बेटी बनी बैठी
खजाना-सभा की
रपट की बिसात ही क्या
भले अपने 'अ उ म से आध इच बड़ा
पर बना तो लिया ही रपट का कोड
बन ही गया कोड
फिर दस दिशाओ गुजवाने मे कसर कैसी?
तू तो रहे अपनी कदरा मे फिर
मुझ से ही सुन ले
रपट का भारत-ईजाद कोड है
'खुल जा सिम-सिम'
तुझ से मूढ्मति भले माने इस पर
चालीस चोरो वाले अलीबाबा का
सम्वतो पहले हुआ पेटेट

मगर मुझ अष्टावक्र का तो
ताजा-ताजा ही ससार-विख्यात
धन-रत्न भरतो की साक्षी मे
इतना बडा ठेगा,
बोल, मेरी बात कलदार
जैसी रही या नही ,

मै — रही भाई, रही,
बस, ऐसी ही हिन्दी बोला कर
मन मे रम जाए
कभी-कभार टीप भी लू
और बताया भी करू लोगो को कि
ऐसे-ऐसे बोला करता है अस्ट अस्टा ,

मेरा अष्टावक्र — मैने कितनी बार कहा है
नहीं ही बोल पाएगा तू मेरा नाम
अरे जोतखी[1] द्वारा थरपा गया
मुझश्री का नाम
मेरे घरवाले भी नही बोल पाते
कल डाकिया बड़ी देर रहा
तेरे इस घोसले मे
चैक ही आया होगा,
तब कर इधर
एक महीने की 'ऋग्वेदी पूजा' का खर्च,

मै — क्या बोला तू, फिर से बोल तो
चैक वह भी रायल्टी का!
अरे रकम न दिखे
नाम-भर देख लू चैक पर

1 ज्योतिषी

घी-खाड से ठस-ठस कर दू
बाईस फुटी तेरी आत
पूरे बरस-भर का खर्च
निछावर कर दू तुझ पर
एक बार ही जो लुढका दे नीली छतरी वाला
न सही छप्पन करोड़ की चौथाई
बीस-पचीस हजार की ही गोथळी[1],

तेरी तो ओझरी भरी है न भाई
पलारे ही जाए है जीभ
देख, चोथाई इच दात
और दो सूत जीभ घिस गई है
पखी वाले से वीनती करते-करते,

मेरा अष्टावक्र तब तो तू नौवा
अचरज हुआ मेरे लिए
सात तो ज्ञानियो ने गिना दिए
आठवा मेरे देश का लोक-राज
फिर अब तक का तू,
तेरे सोच की धातु मे
कुछ खास ही मिलावट हुई है
गळगचिया जो नहीं हुआ
पखी वाले के भरोसे घिसते-घिसते

घडी बना कर अग्रेजी सिखा गए
विद्यासागर तो रहे नही,
'शुन शेप-बर्बरीक-रैक पर
लगा बिराकट खोल गए
डा डोकर पर भी फुलस्टाप आ लगा

---
1 थैली

अव तो तुझे डा महादेव साहा की
लैब ही भेजा जाए
तव पता चले केमिकल्स का,

मै

फिर आ गया उसी गिट-पिट पर
पहले मुझे खर्रेखा कहा
अव केमिकल कहे
चिरायता रोज खाता है क्या?
अरे आदमी हू, साव साबुत आदमी
गणाधिपति के टोले का
अखण्ड पदयात्री न रहा भले,
कभी झालाना डूगरी
वासवाड़ा-टोडा रमजानीपुरा मे
घादमारी तो करू ही हू,

भले दस ही दिन कडकड़ाए
टैकनीकलर कागज जेव मे
थावस-धीरज जैसे शब्द
तो तूने पढे ही नहीं शायद
जा देख भूतपूर्व हुई मेरी सिठानी को
वजाये वह भी वरतन-कनस्तर
मगर मठार-मठार कर
मुझे लगे, अमीरवाई कर्नाटकी गाए
कद्दावर हो गए सारे तो
365 दिन छत्तीस ही रहे
तव क्या करू उसे देखने के सिवा
जी तो फिर भी नहीं

मेरा अष्टावक्र

नहीं ही भरेगा जी प्यारे
हा, फूक अवश्य ही

निकल जाएगी किसी पल,
ऐसी अघटना न घटे तेरे साथ
इस सोच का मारा ही तो
जब-तब झूझा करू तुझसे,

तुझसे होती रहती इस झूझन मे
वैसे तो पूरे ससार का
पर विशेष रूप से बीसियो धर्मो से
प्राणवन्त रहते मेरे आर्यावर्त का
धातुयुग मे आते-आते घड़ा गया
मौलिक सिद्धान्त
बखानना ही भूलता रहा
थोड़ा पहले बता देता तो तू
देश का आधीटा-चौथाई नापता
'इस्कान-टिस्कान' का
मझोला प्रभुपाद' या फिर
'ईश्वरीय विश्वविद्यालय' का
प्रजापत तो हो ही जाता
खैर मैं सुबह का भूला शाम लौटा हुआ ही सही

सुन, एकासनपति।
टीका— वेद-गीता-त्रिपिटक की हो
या किसी इमरत बाणी की
लिखे तो बिद्या-ब्यसनी ही
पढी जाए, न पढी जाए
जैसी बात पर वे माथा नही खपाते
वे तो केवल मुडिया झुकातो को ही देखे,

यह हुआ कोटि-कोटि जन को
सोतो-जागतो-उघतो-चलतो को

अनवरत ऊर्जावान रखने वाले
दार्शनिक सिद्धान्त का 'अ' भाग,
अब सुन 'आ' से चलकर
'इ' पर दही, नही बर्फ-सा जमा
दूसरा और आखिरी सर्ग
इसका शीर्षक है 'प्रवचन'
अब तुझ जैसे
'आम आदमी' के नुमाइदे लेखक को
इसकी व्याख्या बताऊ
छोटे मुँह बड़ी बात हो जाए
सो मै आज करु न कल
'प्रवचन' को तो तू
भूत-भविष्य-वर्तमान की मानिद
घोल्ली-चोलचे-चोलबे ही मान,

गले नही उतरा न मेरा कहा
तब 'जनसत्ता' 'विश्वमित्र' ही क्यो
उघाड किसी भी अखबार का तीजा पन्ना
वाच जा पहले कॉलम से छठवा
'राष्ट्रसत फला वदनीया मातुश्री
परम तापसनी इतम्भरा 1008 श्री
अघोरवजी के प्रवचन के सिवा
और कुछ मिले तो
ले जाना मुझसे एक पाव के पैसे

म ठहर तो क्या नामSSS
हा, वाकेलाल' अव तो तू
दर्शनशास्त्र पर उतर आया
कहीं तू उस केरल वाले
अली वली का लगोटिया तो नहीं

जिसने मा गो वाले कलकत्ता मे
बीजी गई उर्दू अकादमी मे
टीकी मार्का वेद-वाणी पर
अपने समय की चिप्पी साट दी थी।

मेरा अष्टावक्र हा, सटाई थी, मगर तूने
कहा-कहा, क्या-क्या
सटाया-अड़ाया, यह तो बता ,
तू जो बीच-बीच मे
हकलाता-सा टगड़ी लगाए है न
यू पटखनी खा जाने वाला मै नहीं
तकड़ी लेले और तोल ले
मेरी बेसकी[1] और बोली दोनो,
मै तुझे न पूठ दू, न चुप साधू
और न ही उकताया भीतर घुसू
अरूभरू[2] रहकर ही उघाडू
तेरी इस सून का आकाश-पाताल,

'सून' सुनते ही तो
ऊपर उठ जाए तेरी आखे
और वेद-वाणी-प्रवचन-दर्शन पर तो
थोथे मुँह वाला परम जिज्ञासु
ले यह 'बड'- अरे फैशनदार कानकुचरनी
पहले ठेठी निकाल फिर सुन--
न मै तेरी सून को जानू
और न ही देखू श्री श्री आठ-पाच को,
कोई इमरतवाणी लहरती भी दिखे तो
खिड़की-दरवाजा तो जडू ही
एक-एक पर्दा तक टाण लू ,

1 बैठक 2 सामने

मै तो बात करू
निपट समदरिये समाज की
तुझ से कहू बिदास!
वे कलफिये-सफेदिये-भगवे
बताए तो खुद को तुझ-मुझ जैसा
खाए-पिये भी तेरा-मेरा
मगर गीत गाए आकाशिये के
सडक-घिस्सुओ-फाकामारुओ को
देखे भी तो ऊपर से ही
इस कीड़ीनगरे के सुबह-शाम के शास्त्र की
ऐसी झीनी-झीनी व्याख्या को
बाजार ले जाए मुट्ठी चना भी नही तोले कोई,
इनकी एक टीप ही बता—
सडकाऊ होकर भरी हो कभी
तेरे-मेरे खीरसागर से एक भी अजुरी
देखी हो अली-गली फटी बिवाई,
सौ टच सोने सा सच तो यह मक्कू!
वैसे-वैसे सब और उनके लगुए-भगुए
तेरी-मेरी बड़-बड के भोल्यूम को
जीरो तक टीप कर
ऊपर ही ऊपर गरजे-अरडाए
इस पर भी लगा ले अपने पर
तेरे-मेरे भीतर और बाहर के
परमज्ञानी-विज्ञानी की तुर्रा कलगी

मै फिर वही टर्राट, अरे भाई
यह लगुए-भगुए-गरजे तो समझू
पर यह अरड़ाए विवाई
क्या अर्थ होता है इनका

खोल कर तो बता ?

मेरा अष्टावक्र 'काचकोला' तेरी समझ!
ले आ कही से एक चुल्लू शरम
और धो अपना राजस्थानी चेहरा
'बिवाई' और 'अरड़ाहट' पर हक-बक!
फिर 'काचकोला' क्या है पूछेगा ही
मै कोन बाग्ला जानू
यह तो बुलदजी की सगत मे सीखी–
यह तो बाथो पार की गाली कविजी,

मै अच्छा! तू मुझे गालिया भी बके
फिर तो तू पहले मेरा साकिन जान ले-
मै धुर थारिया डूगर[1]
और जाया-जाम्या भी उस शहर का
जहा विवाह तो विवाह, मौत तक पर
मल्हारी स्यापे गूजे
मै जो अपने असल पर उतर आया तो ,
तू ये जा वो जा ही,

मेरा अष्टावक्र बस, एकदम साइजम
मै तो ये ग्यारह तीये तैती[2]
पर तू तो आ उतर अपने असल पर
मुझे आदि बाबा बातेरीनाथ की सौ [3]
तुझे साच्छात मलग देखू
मोगरे का गजरा पहनाऊ तुझे
जेठ की बळती दोपहरी मे
निकल पडू नगर-फेरी को,
तुझे धव-धव चलते देखे तो

---

1 रेगिस्तान रेत के टीले 2 तेज भागना 3 सौगध

जाळिया-झरोखे जड़े तमोले वाले
और पूछा करे दूजे-तीजे से
कहा से आई   कहा से आई यह पछवा?

मीठू मिया[1] कब से चाहू
आ अपने असल पर
हो तो सही हम-आहग
पनाले-सा बहे मेरा पसीना
और तुझे बास[1] भी नहीं
नाक है या डूजा?

सन्नाटे के शिलाखण्ड पर
धूणी तापते हे तापस[1]
इस योग से क्या साधा-पाया
यह तो तू ही जाने
पर नवरतन बिजिया से
छक-छकी तेरी इस तरग मे तुझसे
कितना छूटा-अनदिखा रहा
यह तो मै जानू मै
तेरे भीतर वाला जो ठहरा
तेरे हिले-चले बिना
मै भी क्या हिलू, चलू
बार-बार टोकू, कहू तुझे
उठ, जा फिरा एक शून्य-शून्य
टनन-टननते ही भाग लेगी
लाल तख्ती लगी जीप
दर्ज करवा आ खास खोजी खूणे[2] मे
खोये माल-मत्ते की रपट
मत रह यू जीवित-समाधिस्थ,

1 गध ■ प्रकोष्ठ

जैसे साफ किये कान
ले यह अन्नू की लोटड़ी[1]
कल आखातीज थी न
उसकी नानी ने ठारी,
छपाक-छपाक छीट आखो पर
फिर देख सैचन्नण[2]
तुझसे छूटा पर ठीक तेरी देहरी से शुरू
तेरे असल का विराट चितराम
इसका छेकड़[3] तो
परमहस-परमाचार्य विभूषित भी
नहीं देख पाए भाई,

मै   ठहर भाई, ठहर तो
क्या शब्द-रतन लाया है
चितराम   चितराम ही तो
मै भी वहा   वहा रे
उसे तैरती देखना चाहू
तेरे इस फोहे ने क्या ठडाया है
मेरे तवे-से तपे कलेजे को
जी चाहे तुझे विद्वानजी कहू
अरे, ऐसे बोल के आगे
कई-कई इमरतवाणिया ढम-ढम ,

मेरा अष्टावक्र   बोल लिया या अटका
रह गया है कुछ और
अभी तक तो यही सुनता आया
घटी-भर हरी[4] चढाने वाले ही
भोले शम्भू हुआ करे
पर तू पीला-पीऊ होकर भी

1 माटी की छोटी लुटिया 2 खुला यथार्थ 3 अन्त 4 भाग भरी लुटिया

ऐसा कोरा कक्का
कुछ-कुछ समझने लगा हू तुझे
अब गाली नही दूगा,

अच्छा, तेरे सुख की खातिर
मान भी लू, मुझे नही,
तुझे दिखने जैसा कुछ है ही वहा
पर मेरे सामने आ बैठते ही
हुआ कि नही वह उडन-छूSSS
और बद भी हो गई
तेरी अपने आप से बोलती भी
यह हुआ एक से दो होने का
भोर[1]-सा परिणाम
और जे तू भीतर वाली उघाड कर
इस बाहर से जुड़ा दे तो वो-वो दिखे

यह है देहरी बाहर का चौक दिवराला[2]
आखी दुनिया तो
बस इतना भर जाने
चिट-चटख चिट-चटख ही करे आग
पर हमने तो हगड़-हगड़ मे से
'बचाओ   बचाओ   '
आदमजात बोली बुलगाकर
परोस दी विज्ञानियो की थाली मे
एकल कामधेनु घी-सी
भारतीय पहेली–
बूझो! बुलवा बताओ!
लपर-लपरती लपटो से
अग्रेजी-फ्रेंच-फारसी का एक भी आखर

1 सुबह 2 राजस्थान का गाव

यह रही दिवराला से
लगी-टगी[1] भाटेरी[2] गवाड़[3]
यहा की भवरी तो
गुलाबी नगर[5] के न्यायपति को
बार-बार हलफिया बयान दे
'माई लाड' गीता-माता की सौ
अग-अगिया तो
नीचे से ऊपर तक नोची-फाड़ी गई
ढापी है तो आप से लाज कर
कहो तो, उघाड़ कर दिखाऊ हुजूर को
नहीं   न सुनो, न देखो मुझे पर
पाच-छ फुटे
पच-प्रधान सबूत साडो को तो
दड़ूकते हुए सुनो!
आप नही ही सुनेगे
यह मै ही नहीं,
मेरी आल-औलाद
आने वाली सदी तक भी जानती जाएगी
मगर तेरे दर्पण मे अपना
और अपने दर्पण मे तेरा फोटू दिखाना
कभी नहीं- कभी नहीं छोड़ेगी

ले, देख, सोनल धोरो के बीचोबीच
गगासिह से कुमार सेन
और मुझ झुरियाये तक
बनती आई नहर
पानी तो 'साड़े दी महर, बहे ना बहे
पर यहा दो जमात तो
खटणी करती ही जाए—

---

1 आसपास 2 राजस्थान का गाव 3 मोहल्ला 4 जयपुर

पहली आदमजात
और दूजी गदहे
अब ये मस्टर-रोल के अधे
फाका फाकते अघाए
आ जाए लाव-लस्कर के साथ
दाइम नगरी[1] के हाकिम को देखने-दिखाने,
पहले मुझ जैसो के नाम पर दे वागे[2]
चलते देख मुझे
टग-टगती वड़की भी चल दे
पर भैय्ये! 'रेत नही फाकगे'
कहने-भर पर सड़ाक-राड़ाक
मूलनाथ ढाल न वने तो
मेरी वड़की की छुट्टी ही,
पर काळकूटे चेहरे तो
बन ही जाए टैक्नीकलर
फिर भी तीन डकार आए—
हाकिम, उनकी हिकमत
और लटपट धरती धोकती जनता
मै कब कहूँ तुझे
लिया कर ऐसी परसादी
मगर खाने वालो को देख तो लिया ही कर

मै

तब तो तू बड़ा ही हिम्मतू! पर
विद्वान भी और जर्रे-जर्रे भी खा ले
औरो से मत कहना
मुझ से तो दूर से भी ना देखा जा सके
छापा पढता हुआ भी
ऐसी-ऐसी खबरो से आख ही चुराऊँ

1 बीकानेर 2 आवाजे

थोडी देर बाद ही चुराना आखे,
मेरे कैमरे पर चलता
एक छोटा-सा यह वायसकोप भी देखले—
यह पदमश्री राय की अर्धांग,
पर सिपहसालार हुई अरुणा,
कभी बीकानेर वाले भरूसिह की नही
पूरे राजस्थान के भैरूसिह की
ठीक नाक के नीचे
तो कभी भीम-माडल[1] मे
जन अदालते जुडवाए
पीछे ही सही पर
बैठना तो पड़े ही सरकार बहादुर की चिल्लर को
फिर तो फटी बडियो-चूडियो वाले
फेच-फेच फेचे
राहत-योजनाओ के चीर
वहा तो बच गया दु शासन
मगर यहा कौन 'कृष्णा' आए?

यहा तो बुलवा लिया
मूढमति अरुणा ने
मुझ जैसो को न्यायपति बनाकर
'आर्डर-आर्डर' के नाम पर
जुबान और कान—
''कोड़े जाओ जी हाकमजी
दैनगी छत्तीस का छ ही दिया
तीन कठै सै
जैसी खनन-खनन तो
मुझ तक 'फैवीकोल'-सी आती दिखे—
पाखड के राज को

1 उदयपुर (राजस्थान) सम्भाग की तहसीले

स्वाहा-स्वाहा होम दे ''
हड़बड़ता ही उठ जाऊँ,
और चाय से बुझाने लगू
अपनी इस स्वाहा-स्वाहा को,

यह क्या रे, स्वाहा-स्वाहा कहा मैने
और पसीना-पसीना तू
अब क्या करु यार
अपना राजस्थान है ही ऐसा
पर ठहर तो
इस क्षण तक सुनता आया हूँ
अपने सूबे मे
एक नख़लिस्तान भी है
तब चल ही पडे
हिमालय से बूढे फिर भी
बावनिये आबू की ओर
मै तो नहीं ही होऊँगा बाग-बाग
देखता जो रहता हूँ
आमार बाग्ला का झाऊगाछ
पर तू तो अरावली को देखते ही
बकने लगेगा
राव बीका को गालिया—
अरे मूछल[1] बाप के ताने पर
राज बसाने घर ही छोड़ना था तो
पच्छिम क्यो
पूरब-दक्षिण ही मुड़ लेता
ख़ैर नाम-भर को ही सही पर
तेरे ससोळाव-हरसोळाव से बड़ी
और तुझ मे न समाती
है ही यहा नक्की झील

अब नाप-जोख मे क्या जानू
पर मार्फत मधु, मार्च   अटेन्सन विदेश पलट
डा अरुण शर्मा के
जितना जैसा देख दिखाया आबू
मेरी समझ मुजब हिसाब इतना ही कि
दस बिसवा पर
जनता जनार्दन और उसकी आल-औलाद,
बची नब्बे पर
ब्रह्मकुमारी-गिरी-भारती
आबा-बाबा-आश्रमपति,
दातो से जीभ बचाकर देखना भैये
ये मदिर   सभागार   ग्रथालय
साच्छात अमरावती   इन्दरसभा
यहा हुआ करे-
सौ कुडी-हजार कुडी जगरे
यही लगा करे
ब्रह्मयोग-राजयोग के आसन-वासन,
अरे हा, यही तो निकाला था
भगवानजी रजनीश ने
आज के आदमो-हौवो का जलूस

तूने नही पर मैने तो सुना ही—
'त्येन त्यक्तेन भुजिथा   ''
कहने वाले ने जाना ही नही
मै तो कब का दिवालिया
और इस पल मै
और मेरे पास केवल तू
अपने को दू या तुझे
और लेने वाला भी

क्या राधे-पकाए तुझ-मुझ से
ऐसी सूम-साट
चोपदार बुलदज़ी कैसे सहे –
भुगता दिया खाटी अनुवाद–
'लो, त्याग दिया
आज से ही यहा आना '

हुमक उठी हो दर्शन की
फिरा लाऊँ और
सत-महत के अखाडे
पर देख ले साव-साबुत है तो चप्पल,

मै

अब तू थोड़ा थमे तो
पाच-सात पन्ने भरलू,
इससे और कुछ हो न हो
एम ओ की प्रतीक्षा तो लम्बी हो जाए
छोड लिखने से तो तू यू भी चिड़चिडाए
तब फिर थोडी देर उसे खोज ,

मेरा अष्टावक्र

धत्त तेरे की अब भी
तेरी असल यही रही क्या
मग्गू मारजा[1] तेरी असल औकात
वह नही, इस हा इस ठोस धरती पर
बसी दुनिया है
इससे जो भी छूटे भरम गति ही पाए

मै लिखने से नही
तेरे सोच पर तेरी इस
सून समाधि पर कुनमुनाऊँ
गोरखपुर वाले भाईजी ने भी

ऐसी ही भरी 'कल्पतरु-कल्याण' की वहिया
मगर किसका कल्याण हुआ
यह तो पढारिये ही जाने
पर मेरे तई कागज के भाव तो हेSS वो रहे,
ऐसे पुरानो का पता नही लगा पाए शायद
तव ऐसा कर, जबलपुर वाले
ज्ञानरजन से जा पूछ-
क्या वना पिताश्री के पोथो का ,

मै भूल हो गई भैया,
तुझ-सा सयाना यह तो जानता है कि
आदत की लाचारी तो
छूटते-छूटते ही छूटे,
हा, कभी-कभी मुझ मे भी
नया बीज उपज आए
अव इस 'कोठे-उपजे' को
भीतर कैसे दवाए रखू,
देख बुरा मत मानना
तू वो महादेवी वाला नही-नहीं
कोरा फेरी वाला भी रहा है क्या
मेरे दाजीश्री भी गबरू होने तक
फेरी वाले रहे, मुझे भी दिखाए
साध पर पडे रग्गे
तव कहीं वने व्यापार-पडित
तू वैसा तो नहीं ही
फिर तो यायावरियो के टोळ[1] मे तो रहा ही
क्यो ठीक कहा न मैने
वो भी तो हुए न अपने घुमक्कड शास्त्री
तभी तो तू इतना-इतना जाने

1 समूह

पर मै तो यह कमरा   कागज
हा, पोऽऽस्ट मैन की आवाज
इसके सिवा और क्या जानू
इस पर तो मै भी वहुत सोचा करू
है कि नही यह अचम्भे की वात'

मेरा अष्टावक्र   अचम्भे की यह लक्ष्मण-रेख
मैने नही, तूने ही खीची अपने आगे
मै तो कव से कहू—
लाघ रे लाघ यह वाधा
और इस उमर मे लाघ भी ले
प्रथम-पुरुष तो फिर भी न बने
हा, खुली हवा का सुख तो मिले ही,

तुझ से पहले
तेरे-मरे कई-कई पुरखे
अपनी तो अपनी
राज-समाज-धरम धुरीणो की लेखी
कई-कई भूलभुलैया
फदाक-फदाक लाघ गए
और ऐसे-वैसे आज भी कम-थोड़े
इधर देख, यह मीलो-मील
लम्बा हरा गलीचा
विछाया करते थे केवल लगोटिये
और लूटते रहते थे चुन्नट वाले
एक-एक को साट कर
खड़ा कर दिया कोने मे जोतदार-जमीदारो को
और फिरवा दिया हाका—
आओ रे खेत मजूरो' यह रही श्यामला
इस पर जो विछे   जितनी विछे

सब तुम्हारी हा, तुम्हारी अपनी

अब रही बात 'भागो नही दुनिया बदलो' वाले व
सो लेखकजी' वैसा पूत तो
कोई सूठ-कालीमिरच खाई मा ही जाए
जा, पूछ आ अपनी काकी से
तेरे पगलिया धरते-धरते
क्या कुछ खाया था उसने?

मै

सूठ-कालीमिरच मे क्या जानू
काकी-मामी तो दूर-दूर भी नहीं,
हा, मेरे आगन मे
चारे को मुँह मारा करती
इस दो-पगी गाय ने तो
नहीं ही सूघी गरम घी की सुरभ
पर यह चिदी कैसे हाथ लगी तेरे
यह तो गुचगुचिया मडा
मेरा पिछला पन्ना
यू पिछला दिखाने मे तुझे मजा आता है क्या
ले, होठ सिये और आख भी बद ,

मेरा अष्टावक्र

रुक भैये रुक, मै कहू और तू दुख जाए
ना रे, ऐसा तो सपना भी न लू
फिर तेरे दुखने से
मै नही बुझू-दुखू क्या
यह तो इस दिल्ली को देखू न
बस खा जाऊ ताव
अब ताव मे तो तुम जानो ही
आवळ-कावळ' छिटक ही पड़े

---

1 कड़वी बात

चल, ढीला कर प्यारेलाल
अपने चेहरे पर कसा माजा,
चल, राजधानी देखते बढे
पर अब पुरानी दिल्ली की बात
मत पूछना, कहे देता हूँ हाSSS,

मै — ऐसी फ्री स्टाइल तो मत चला,
फिर मै तो धीमी गति का समाचार
अब जब ले ही आया है यहा
तब इसका आगा-पीछा भी बताता चल
बहुत कुछ तो यू ही
छूट जाया करता है मुझसे
फिर तेरे इस आधे-अधूरे मे
बचेगा ही क्या मेरे पास
और यह भी तो सोच,
अकेला ही कभी आ निकलू इधर
तब क्या हाल हो मेरा?

मेरा अष्टावक्र — हा भाई, आधी-अधूरी पर
ठाकुरजी को सिंगारती
भौजी की कही याद आ गई—
रेडियो सुने नही टी वी देखे नही,
और अखबार पर तो
आटा ही छाने-छनवाए
फिर भी खबरे बरसाया करे मुझ पर

'सुनो हो देवरजी' कैलाश मानसरोवर पर
पूरी रामकथा वाचेगा मुरारी बापू
एक करोड़ की खरची करेगे भगत
यू कमाया जावे धरम-पुन्न

तुम तो दिन भर पोथे चाटो
और सुबह-शाम करते रहो
अपने बुलदजी के साथ हथाई[1]
थोडी कसर रही थी न, लो,
आ गया पूरने, 'साऽऽला वाला' अड्डावाज ,

अखबारो का मै भी पूरा रसिया
पर बापुओ-श्रीमाओ की
खबरो के ख पर ही
हो जाया करू निरा तोताचशम
तब 'थारे बिना म्हारो कूण धणी' भजती
भौजी से, उसकी छोटकी से
खाऊ ही अपनी समझ पर मार
तब तो मै और बुलदजी
कुछ देर को 'एग्री ओल्डमैन' ही,
हमारे उत्तर-पडूत्तर तो उनके लिए
मैदान मे बजते भोपे
वे तो मगन-मगन
थाल परोसे पखी वाले को,

पर यार! ये छापे वाले भी
अपनी ही चाल के कमज़र्फ
कुछ कैक्टस तो यू उगाए कागज पर
कि आख तक ऊँच आए
ऊ पार तो इनमे से होकर ही जाना पडे--

उस दिन तैरना ही पड़ा
फ्रटलाइन के पन्नो मे-
सायरन जैसी सास से

1 लम्बी चौड़ी बातें

कामगारी बिगुल फूक
परमपिता के राज्यावतार
जार के रूस को बेदखल कर
'युनाईटेड स्टेटस ऑफ सोवियत रसा'
का गज-भरी नाम धर लिया अपने पर,
उसी को ग्लास्तोव-पेरोस्त्रोइका के
गडे-तावीज पहना कर
कर दिया एक इच रूस।
छिरमिर-छिरमिर मार से फट गया पहाड
निकल आया है उसमे से
खीनखाफ का स्लीपिग किट पहने
अलेक्सी दोयम।
अरे, आज जिसे देख रहे है न तू-मै
आखी दुनिया की थानेदारी करते
वही सैम चचा,
इस लाल चौक से उठती
गूजो-प्रतिगूजो को पीठ दे
बनाने लगता था
जमीदोज़ शैल्टर हाउसो की बस्ती।
उसी मास्को का पिता-लुजकोव
बा-अदब कुबडाकर
पुरातनी चर्चपति की अगूठी चूमे।
तब तो खारा धुआ ही रिसे
वादिकी[1] बातेरियो की देह से,

तुमने यह कहावत तो सुनी ही होगी
'हमाम मे सारे नगे '
यहा तो मुझे हैन्स एडरसन का
कथा-नायक 'राजा नगा' याद आए

---

1 वाम दिशा वाले

इतना तो अब तू ही बता दे
बाजार-विस्तार की सभापतियायी करते
और पड़ौसी देशो को
पचास हजार टन सिगरेटे पठाकर
लोक तिजूरी मे
चार करोड़ डालर की बाबी बनाते
ईशरजी के इस दल्ले को
मै तू या और कोई
नगा धर्मावतार कहे
या श्रीमान डालर?

गणित मे तो तू भी साव कद्या रिगस[1]
और मै भी तेरा हम-शक्ल,
मूल आखर थे चारसौ मिलियन डालर
ताका-झाकी करते
पूछ ही लिया कलमघिस्सू लड़कियन से
'चार करोड़' कहती-कहती जा-घुस
यह रकम इजिकुलटू मेरा रुपया कितना–
मेरे लिए तो आइस्टीन की थियरी को
'हाजरा-राजदान'[2] की चुनौती जैसी,
ऐसे समाचारो से
साबका पड़े ही बातेरियो का
रहना-जीना जो इन्हीं के बीच
यह तो हो ही कैसे
तिरछ से देखने वालो को ततैया न करे
समझ की उनकी वळत[3]
सो कलमगिरीजी महाराज,
फुट-आधफुट सीखनी ही पड़े गणित,

1 निरा कमजोर 2 भारतीय वैज्ञानिक 3 तीव्र जिज्ञासा

इस उमर मे सीखने वालो को
कोई पोसवाळ-कॉलेज
क्यो दाखिला दे भला?
एक बार तो ये 'प्यासे' जन थमक जाए,
पर इनकी जात तो
'जिन खोजा तिन पाइया ही
सो लगू अपनी दूरबीन से खोजने
तभी गुजरता दिखे यह कलाम
ब-कौल   बड़ा नाम ही
'दानिशमदो की कमी नहीं गालिब
दूर ढूढो   पास मिलते है'   ,

''कविता ही पूरी करो न नाना
ये एक मे इतना तो दस मे कितना
लिख-काट-काट-लिख
क्यो तुडी-मुड़ी कर रहे हो कागज पर कागज
प्लस-इटू किया भी है कभी?''

बैठा तो कविता ही पूरी करने बिट्टू
मगर बीच मे ही आ पड़ी
यह लाल-बत्ती गणित
इसके बुझे बिना
कविता को हरी दिखे ही कैसे?
तू ही जरा देख इसे—
एक बरस मे बारह मास
पाच के आगे इटू बारह
हुए बरोबर साठ महीने
यहा तक तो ठीक हुआ न!
अब इतने महीनो के दिन
कैसे जोड़ू काकूची?

कई तीसे, इकत्तीसे भी,
और एक मोरारजी देसाई वाला भी तो
मै तो यही गत्तागुम
इसकी कुजी कहा से लाऊ?

'च च नाना' आप जैसे
दस-बीस और मिल जाए न
तो बाऊ से कह कर
परमानेट गैलरी बनवा लू
दिखा-दिखा कर वो पाकिटमनी कमाऊ
कि होड लग जाए मेरी हम-उम्रो मे
विज्ञापन छपवाते फिरे-
'हमे चाहिए ऐसा नाना'
खैर, साठ महीनो मे कितने दिन
यही न आपकी प्रॉब्लम
माई डीयर नाना' गणित मे
सपोज अर्थात मान लो होता है
लो, मुझे देखने लगे
लिखो अपनी कॉपी मे
एक माह मे तीस दिन
तीस इटू साठ
हुए एक हजार आठसौ दिन
हुई तो पूरी काउटिंग ,'

अरे, ठहर तो, तू तो
गणित मे एकदम चर-भर
अब चिटूली-भर रही
इसे भी तो बूझाती जा

'नाना' आपका वोSS

खाटी मारवाड़ी गीत है न
बहुत डिमांड रहे उसकी
और तालियो की गड़-गड़ तो
हा, याद आया— थारे लावा जोड़ू ',

चुप कर तो, जानता हूँ
फुर्र होना चाहे है यहा से
बस यह-भर बताती जा—
पाच बरस मे दोसौ चर्च
तब एक चर्च मे
कितने दिन का खर्च लगा ?

'यह तो बता ही दूगी
पर पहले यह बताओ नाना
इतनी-सी गणित जाने बिना
कॉलेज मे कैसे जा घुसे
फिर बिना डिग्री वाले
एक नही तीन आधे एम ए
कैसे रहे होगे आप के सर
और कैसे टालरेट किया होगा
माफ करना आप जैसो ,

देख पृथू, अभी बहस मे मत उलझा
मुझे लगी है अपने सवाल की
तू यह चाहे क्या, इसे छोड़
बाचने लग जाऊ पिछला टीपणा
सुनते-सुनते भाग छूटेगा कौन
अभी तो तू इसका फलन बता

यह भी कोई हिसाब हुआ नाना!

एक हजार आठसौ को
डिवाइड करो दोसौ से
तो कोशट आया केवल नाइन
नाना। विचार और स्पीच
एक तरह से लेबर ही हुआ न
यहा तो दोनो खर्च हुए, हुए तो
जरा अपना पर्स इधर करिये तो
वाय वाय बाय नाना।'

नौ दिन मे एक चर्च
एक हजार आठसौ
पाच बरस मे दोसौ
लेनिन से गोर्वाचोफ तक आते-आते
रूस के लालचुट चेहरे पर
अलैक्सी द्वारा ऐसी चून-पुताई ।
अपने यहा भी तो
पीताम्बरी गेरुआ
बोल तो सही,
एक बार तो बन जवरा-बोलारु[1]-
नहीं भरता पेट चर्च से।
नहीं बुझती प्यास गेरुए-पीले से।
और और भभूक उठती है
जठरा और तिरस
जलने लगती है आखे
इन बाधवरियो-अघोरियो को देखकर,
दुनिया के हर कोने मे की जाती है
इस अफीम की खेती,
हमारे देश मे भाठा-मूरत
बड़-पीपल-कदली ही नहीं

---

1 जोर से बोलने वाला

साच्छात गाय माता,
उसकी पूछ-मूत-गोबर तक की पूजा
फिर साड की आरती उतारता
हमारा छुटका कम्पूचिया तो कहे ही—
इसकी मा को तो
पडित कम्बुज ही लाए यहा,
जा, देख आ तू भी ,

मै जाने की बात छोड़ गुरु,
बैठा-बैठा ही किसको देखू क्या देखू
अभी तो मुझे तुम ही तुम दिखो
कुरुक्षेत्र मे प्रकटे विकराल जैसे!
तुम्हारे आगे मथेरवन्नू[1] साष्टाग
चित्रा-सा मुझे भी देखो प्रभू
आखो के पपोटे सूझ गए मेरे,
कानो मे तो बैरीसाल नगारा बजे
लाओ, रूमाल ही दे दो
दो फाड़ कर डूज लू,
फिर बोले जाओ
तेरी इस दिल्ली-दिखावनी से पहले
दक्षिण-उत्तर पसरना ही है मुझे,

तूने नहीं सुनी पर मुझे तो सुननी ही पड़ी
अभी-अभी मुझ मे बोल गई आकाशवाणी,
लुबडुब के थमते-थमते
मुझ शब्द-कर्मी की
यह कातर वाणी भी सुनले—

सात जनम ले लू

1 सिर झुकाऊ

फिर भी न डिगा सकू एक सूत तेरा आसन
और बार-बार जन्म-मरण से छूट
अमीबा भी हो रहू
तब भी तू नही छोड़े मेरा पीछा
बोल, है कि नही
तेरे-मेरे बीच का यह ब्रह्मसत्य?

मेरा अष्टावक्र एक नहीं सात फिट्ट तुझ पर
और तेरी समझ की आकाशवाणी पर
घोघा बसत। क्षण-क्षण मे नही
अणु-त्रिसरेणु मे बदला करे अमीबा
यह तो समझ लेता
सायस-भणी अपनी जायी से
अब भी पानी नाक के नीचे ही
जा, सीख आ, यह ढील दी तुझे,

सगग-सगग करे मेरा माथा
तेरे इस दरसाव पर
गुस्सा आए दो गस्से बेसी चबाना
पर कहे बिना कैसे रहू
तू, लेखक, वह भी छुरछुरो-तमगो-सजा
और ऐसा डिप्रेसन
यह तो यह तो एड टू माइ नॉलेज
तू लेखक का ल नहीं
कागज पर आखर भूजने वाला
भड़भूजा है। भड़भूजा,
अरे अकेला तो
हेमिग्वे का भाई भी पड़ा
मगर मोह तो नही ही छूटा
इस लोक मे अपने होने की सत्ता का,

तोप दाग कर कर दी घोषणा–
मै राष्ट्रपति, मै ही नागरिक
इस एक-आबादी द्वीप का'
इधर तू देखे-झूमे ही नहीं
मेरे रुनन-झुनन्ते ससार पर ,

"बहुत खारा बोल रहे हो अष्टावक्र! इसे ऐसा ही खार
खिलाते रहे तो सम्भव है, थोडी देर मे यह
तुम से पानी मागना भी भूल जाए, यह तो अब गिरा
अभी गिरा-सा, फिर किसे चलाओगे ?"

अष्टावक्र

मै और खारा वह भी इसके लिए
नहीं दादू नही, यह तो
गूजो-प्रतिगूजो वाली
लोकवाणी वाला सच
आ जाया करे मेरी थाली मे
वही परोस दिया करू इसे-
'कडवा-बोली मावड़ी
और मीठा-बोली लोग'
क्या मजाल जो मुह मे धरले
अब मिसरी कहा से लाऊँ?
जाने किस रामजी का तीर
या कोई ओगतिया अगस्त्य
कब पी गया मेरा यह सारस्वतेय
तब से, हा तब से सूका-सरणाट
मेरा हेमाणी रग जागळ[1]
और मै इसका मारू[2] इसकी माड[3] भी
मै तो इसकी समझ,
इसकी सूनी बैठक पर तन्नाऊँ

---

1 जागल प्रदेश रेगिस्तान 2 युद्ध राग 3 मनरजनी रागिनी

"बार-बार तन्नाते तुमको और सुनते हुए इसको भी
देखा है तभी तो फिर बोलना पडा है मुझे,
तुमको सुन-सुनते चौकता रहा है, धीरज उघाड़
बमकता भी रहा है तुझ पर, फिर होठ सीकर
जा बैठ यहीं, जाने क्या तलाशे यह तो तू ही जाने "

अष्टावक्र मै जानता हू, किसकी तलाश है इसे
मगर वह उसे उस ऊपर से नही
मिलना है तो इसी,
एक साथ सात-सात से
वाजी मारते बाहर के समदर से ही ,

"अरे वे तो सातो ही खारे पर यह यह तो जितना खारा
उतना ही मीठा, इस रत्नगर्भी के ज्वार के सामने
गौरीशकर बौना और भाटे से तो पाताल ही
किनारा-कस्सी करले, लगता है मन और हाथ
रीते ही रहे है तभी तो हार-हूरी खाक से सना
थाम बैठा है यह कोना, चेहरा तो देख ही रहे हो
और पपडियो की तरह खिरते बोल भी ,"

अष्टावक्र इस ससार का अधिकाश हिस्सा तो
अपने जन्म से ही
क्या-क्या नहीं हार-हूरता रहा है
पर अपने आगे स्पीड-ब्रेकर और
लाल बत्तिया उगाते रहने वालो के
आसन तो इस क्षण उठवाता जाए
फिर अकेला कैसे
इसी का एक फुनगा-भर
पर केवल सून-फाकू ।

म दहल जाऊ रह-रह कर
यह तो छूत की बीमारी है दादू
फैल गई तो क्या होगा, हा, क्या ,

"प्रलय न हुई और न होगी, ऐसी-वैसी बीमारिया-
महामारिया पहले कब नहीं फैली और फैलाने वाले भी
कब कम हुए, आगे नहीं होगे, यह न तुम कह सके
और न ही मे, यह कैसी चिता की गाठ लगा बैठे तुम?

इसको वहा से उतार कर एक-दो, एक-दो सीध
चलाने का एक उपाय मुझसे सुनलो-- नाटक
तुम भी लिखते हो, देखते भी हो, जानते ही हो
फेड-इन, फेड-आउट प्रोसिनियम थियेटर मे ही
अधिक होते है, तुम तो ऐसा करो, यहा से किसी तरह
इसे नुक्कड पर ले आओ और दिखाते
चले जाओ स्वाग पर स्वाग और इससे भी पहले
इसे पहाड़ी झरने की मानिन्द नहीं मैदान मे बहते
नदी-जल-सा देखो सुनो सुनो, देखो तब
सम्भव है, चलता-देखता उफान हो जाए, ढेले-पत्थर-
तटबधो को अपने मे समाता दूरिया ही दूरिया
नापता जाए, फिर तुम इससे चाहो भी तो यही ,"

अष्टावक्र अरे दादू! यह दिल्ली-दर्शन की पड़[1]
माडी ही इसकी खातिर
भोपा-भोपी भी मै ही
रावणहत्था[2] थामे
मे तो अपना पट ही उचकाऊ
यह तो फिर कगारू सा ब ,

---

1 पट्टकथा 2 एक वाद्ययत्र

मै — कह दिया कगारू सा'व
न जीभ घिसी, न दात
दिल्ली-दर्शन के नाम
इतिहास-भूगोल-गणित ही तो
हो गई अकाल मौत एक पॉकेट बुक की ,

मेरा अष्टावक्र — एक ही मरी, बीस तो और है
रख इन छनैयो के आगे
कितना आटा, कितनी भूसी
सब छान कर दिखा देगे,

मान लिया, तू खूब लिखे
उर्दू-अग्रेजी-तमिळ-तेलगु तक मे छपे
पर कभी कुछ पढा भी करता है क्या?
हाSS तब बता, पढी क्या
'द' वाली कहानी ,

मै — हिन्दी मे तो नहीं 'द' नाम की कहानी
"बाता री फुलवारी" तो मैने
आज तक सहेज रखी है
उसमे भी नही
फिर 'आदम से आदमी'
और भारतीय भाषाओ के साथ
विदेशी कथा-विशेषाक तो
मैने ही सम्पादित किए
ऐसी एकाक्षरी कहानी
सामने ही नही पड़ी आज तक
तू मेरा इम्तहान ले रहा है
या कोरा टप्पा ही

मेरा अष्टावक्र

मास्टर नहीं, हैडमास्टर बना था
वह भी गुलाबी-गुलाबी उमर म
तीस दिन पतीस रुपट्टी वेतन पर
सो भैय्या, इम्तहान लेने की
ताकत कैसे कमाता?
टप्पे, टप्पे तो पजाब मे
ढोलक पर गाये जाए
म तो अभी कथा की बात करू
अब मुझ से सुन कर ही मानले
रही ही है 'द' नामक कहानी,

आदरजोग लोक-कथकी 'बिज्जी'[1] को
अपने सामने सदेह मान कर कहू-
एक चौमुखे पिता के रहे तीन बेटे,
बड़के ने सविनय
अजुरी फैला कर कहा—
पिताश्री मुझे कुछ दे
उस जमाने का सोहनलाल दूगड़ रहा वह
भर दी 'द' से,
खिलदड़ मझले को भनक लगी
बाघ-छाल की झोली लिए
वह भी जा पहुँचा-
'ना' तो वहा स्ट्रिक्टली प्रोहिबिटेड
'द' से अटी झोली लिए
वह भी झूमता फिर लिया
छुटका तो दोनो से बड़ा कारीगर
गुल्लक लिए जा पहुँचा-
बाप! जो भी देना है डाल दो इसमे
तीनो खुश-खुश कुप्पा ,

1 विजयदान देथा

पहले ने अँजुरी खोली
'द' से दिखा दान, वाह!
दूसरे ने झोली ओधाई-
विछ गया दमन हूँSSS
और तीजे के गुल्लक से निकली दया
दोनो ने अपना माल-असबाब किसे सौपा
यह तो मुझे नहीं मालूम
मगर तीजे की वसीयत मुजब
विरासत मे तुझे मिली दया,
अब तुझे मै त्रिवेणी ही कहूँ
नहीं समझा न! किया यह रे
तूने तीनो को रगदोळ कर
बना लिया अपने लिए केवल दयनीय ,

मै रामायण-भागोत बाच-सुनकर
झुरने वालो की या फिर
'ऊधो मन नाही दस-बीस'
जैसियो की बात थोड़े करू
मै तो गुफा से नग-धड़ग निकल
षट-ऋतुओ वाली नौरगी प्रकृति को
लगोलग अपनी पासगिनी बना कर
मगल-शनि तक मैराथन
रचाने वाले आदमी की बात कहू-
बता! कहा से दिखे है यह दयनीय?
तू भी तो उसका हू-ब-हू
फिर भी पूछ आ किसी सलाहवतिये से
या अपने किसी
डाक्टर-डी-लिटिये गुरु से
किस शिलाखम्भ पर

ताड़-भुर्जपत्तर-अजवघर मे
मढा हुआ है मनुष्य नाम का दयनीय
न पढ पाऊ मूल
अनुवाद-भाष्य से समझ लू
फिर शुरु करु यह
अस्सी लाख से वेसी का
कॉस्मोपॉलिटनी दिखान ,
ऐसे गुम्मा-गुम्मा थोवड़े पर
कही और से भले झटक लाना
पर मुझसे तो नहीं मिलने वाला तुझे
गम्भीरमल का सरोपा
देख औधा लिया है मैने
अपने पर ठडा-टीप झरझरकथा
97° पर आ गया है मेरा थरमामीटर
आ, चले इसे देखते ,

मै

ठहर सतगुरु ठहर।
तेरे तो वोल ही
चलत-चलते फाचर[1] मार दे
और तू है कि जापानी रफ्तार सा फर्राये
जवकि मै डैकनक्वीन-डीलक्स का नही
धोरा-पैसेजर का यात्री
यू मुझ मे टूट-फूट हो गई तो
इल्जाम भी तेरे ही मत्थे पडेगा न ,

तेरे ये झरझरकथा-खम्भा-अजबघर तो
सटाक ही उतर जाए
मगर ये कॉस्मोपो दिखान तो
अटके ही रह जाए

1 टगड़ी

तूने मुझे भोलेनाथ कहा था न
मै अब तुझे भूलचद कहूँ
पाच बार कह आया हूँ—
घर से कोटगेट तक की ही पढी अग्रेजी
5 नम्बर वातायनी के लिए तो
खुद तो 'मजबूरी नाम महात्मा' कथनी पर
कैद औपचारिक शिक्षा मे
मगर अपनी नई पीढी के लिए
ठेठ अनौपचारिक के परम तापस
दढियल विमल को न्यौतना पड़ा था
पढा भाई! यह 'टवेटी-टू थीसिस'[1]
और आज भी जब-जब अटकू
जा पहुँचू अपनी काकूची के
किताबची पापा के पास,
अब हरी झडी तो तब फर्राऊ
जब तू अपने उस कोड का खुलासा करे,

मेरा अष्टावक्र तब तो तू जोगे-सजोगे स्थापित 'तीडो राव'[2]
तू रागड़ी-छबीली घाटी वाला नही
साकिन पपाळसर वाला,
महानगर-विश्व-शहर के
ख़याल तक से निपट कोरा
अब किसी से कह दू
तू साइस सिटी की बगल मे रहे
वह तुझ पर तो नहीं
मुझ पर तो ठहाके उड़ा ही दे ,

सच मे किसी शहर की
कल्पना मत कर बेटा,

---

1 एम ए राय की थीसिस 2 नाटक का मुख्य पात्र वास्तव मे मूर्ख पर सयोग से माना गया धुरधर

इसमे बाजार-चौड़ी सडके-होटल
रहने वाले घर जैसा कुछ भी नही है
और ना ही ट्राफिक जाम का झझट,
उग गया न तेरे भीतर
'फिर कैसा शहर' का सवाल
यू समझ, एक तरह से
तीस-पचास रोज की फीस वाला
खास कॉलेज है यह
रचने-घडने की होड तो बद ही रखी है
महाबली मनुष्य ने अपने इस
सात मडलीय जनक-जननी से,
उसी के कुछ-कुछ रचावो-घडावो की
सजीव झाकिया है यहा
साक्षात यहा भौतिकी-रसायनिकी
तू तो साहित्य-कर्मी, वास्ता ही क्यो पड़े
ऐसे-ऐसे शब्दो से
हा टाइम थियेटर तू अवश्य जाने
पर 'स्पेश थियेटर-टाइम मशीन राकेट' तो
सफेद-झक पर्दा ही, और भी बहुत कुछ,
हा, बाबा आदम से भी
बहुत-बहुत पहले का मगर
सदियो-सदियो से खुर-बाल तक ला-पता
फिर भी फोसिल के सहारे ही
जीवित कर लिया गया
महाकाय डायनासोर का
ससार भी इसी मे है

दरसाव-प्यासो को तो लगे ही
समझ की उनकी छुक-छुक मे
कुछ और आ पड़ी ईधन

काली माई के कलकत्ता आकर ही
जान सके जिज्ञासु-जन
अहिरावण-पुत्र बिलगेटस-मर्डोक ने
पूरे भूगोल को ही
बना दिया है माटो-ग्राम[1] ,

अब यू मुँह-फाड़े बैठा मत रह
उठ, पहले जेब भारी कर
कटा आ आठ-दस दिन का पास
फिर 10 से 5 बजे तक
रोज फिरा कर इसमे
दावे से कहू, अपनी बुद्धि-बाइक मे
पहले से बेसी पैडल
मारनेजोगा तो हो ही जाएगा,
हा एक बात बताना तो भूल ही गया
अकेले विज्ञान नगर चले गए तो
रुपिया तो धोबी-घाट
खुद छूछा ही लौटोगे
वहा जूनागढ वाला गाइड नही है
सो भैये दो का बदोबस्त करना,
बोलती पाकिट डिक्सनरी-सा
मै चलूगा तेरे साथ
आ, इस गोल गाव मे
अपना वास[2] तो देखे ,

मै

दिखाने के नाम पर तो तूने
खोखे[3] ही झाड़े है अब तक
देखने को तो बस तू है यहा
और किसे देखू, बता

---

1 हावड़ा जिला का एक गाव 2 मोहल्ला 3 सूखी फलिया

पर सुन, मुझे बडेरो की सीख याद आए
भरे-तरे आगन मे कह गए–
खरी-खरी सुनाने मे
मा-बाप, राजा-गुरु से भी मत चूकियो
सतगुरु तो मान ही लिया तुझे
फिर क्यो पाछ रखू मगर उत्तर
मत्री बनाने वाली या
अदालत मे ली जाने वाली
सौगध से ही देना
तीर्थकर महावीर की मूरत
छूकर आया है क्या मुझ तक,
जाने कब हुआ वह
तारीख-सम्वत तो याद नहीं
पर हर चौमासे सुनू
भूख-प्यास को अलविदा कर भी
सदेह रहा ,

जे तू छाया-छुआ नहीं
तब तो पत्थर पर यह खीची टाकी
तू पक्का कड़का
या फिर छँटियल मक्खीचूस
और खाटी राजस्थानी मुरकी दू
तो तू घाघ एकलखोरा।
बूझ-बूझाकड़ बना
कहे तो खुद को मेरे भीतर का मै
फिर मेरी भूख-प्यास
क्यो नहीं दिखी रे तुझे अब तक?
देख मेरी जीभ, होठ
खेलरे-फोफळिये[1] जैसा

1 सूखी सब्जी

तेला-अठाई[1] तो की ही नही कभी
मै नहीं, तू तो गिनता
कितने टक[2] गुजर गए
न सही मूड़ी, चीना-बादाम
पानी का तो पूछते ज्ञानीजी ,

मेरा अष्टावक्र तू तो यू तडफड़े
गोया जुग बीत गया,
ऊपर देख ऊपर
सूरज ही नहीं सिर पर अभी तो
तेरी इस मनसा गरीबी पर ही
ताव आया करे मुझे
तू कुछ और ही हुआ होता
जो वसीयत मे मिले
'द' से 'दकाळ'[3] या 'द्रोह' रच लेता
इसीलिये तो कोरा कागज-खर्राऊ
फिर भी तड़ी तो नहीं ही मारूगा
पर अब जो टोका तो
कोई और गत तो बना ही दूगा ,

अपने सैम चचा ने
पिछले सप्ताह ही किया है
एक जबरा प्रयोग-
शनीचर की बाड़ी खोजने भेजा है
सिर्फ 32 किलो ईधन-भरा जहाज
सात वरस मे छुएगा डयोढी
हमारे इसरो ने भी पठाया है
खगोल मे छोटा-सा सदेशिया
कभी तो आम-विकास की धारा को भी

---

1 जैन साधना में तीन-आठ दिन के व्रत 2 समय 3 बुलद आवाज

छीट लिया कर अपने पर
लोटे-ऑजुरी से तो रोज ही पिये पानी
चल, कर डाल एक आविष्कार तू भी—
आख से पीकर ही
बुझा आज अपनी प्यास ,

सम्भव है, इतने-भर से ही
जुड़ जाए विज्ञानियो मे तेरा नाम
या फिर उसका
अग्रेजी मे तो उसका नाम इच-भर ही
पर तेरे पल्ले तो अनुवाद ही पड़े,
करूगा ही भले हो जाए पाच फुटा-
अपने इस गाव मे
हर बरस छपे खास पोथिया
उनमे रहे हिकमतियो के
कारनामो की विगत[1]
सो भाई आख से पीने की खबर
उड गई जो आधी की तरह
नुमाइदा आ ही टपकेगा
तेरे इस चाक-चौबद अखाडे
माफ करना ड्राइग रूम मे-
'लीजिये यह चैक
दीजिये मुझे इटरव्यू
खोल दू तो टेप का बटन' ,

ले, पी, यह रहा अपना राष्ट्रपति-भवन
इन्द्रपुरी-अमरावती
न मैने देखी और न ही तूने
पर अपना लालगढ पैलेस

1 विवरण

इसके सामने तो कॉटेज ही
इसी मे बाग-बगीचे फव्वारे
सलामी मैदान हॉल और कमरे
किसकी ताब जो गिन जाए
यही से जारी हुआ करे अध्यादेश-आदेश
यही बने प्रधानमत्री मत्री सरकार
और न जाने क्या-क्या
हुआ करे यहा से ,

मैने कहा था न तुझे
हमारी यह राजधानी
इसका सिहासन छोटा या बड़ा
एक बार भी कोई छू ले
नाम ही न ले घर लौटने का
भौतिक रूप से भले छूट ले
पर मनसा तो फेवीकोल ही

काम-काज का बोझा उतार
राष्ट्र की चाकरी को
अभी-अभी सलामी दाग निकले
एक महामहिम भी
जाए तो जाए कहा यहीं रहे
सो अपने इस रिमोट सेंटर के पीछे
एक विला तो पसद आ गया
हमारे एक्सलेसी को
पर सजावट पर चुप्पी पोत ली
तू क्या सोचे, उनकी सरकार
अपने पाव ठारे रखती

नहीं, चोगू नहीं अच्छा,

अपनी घाटी के सिरे पर
ब्यूटी पार्ले का साइनबोर्ड तो देखा ही है तूने
इसमे आदमी-औरते सिगारी जाए,
और पार्ले भी किसिम किसिम के होवे
जीन-पार्ले   साड़ी-शूट पार्ले
फटाफट भोजन पार्ले
ये तो तू ऊमता-घूमता ही देखे
पर भवन-सजाव पार्ले भी होते है
इटपुट-छुटपुट तो मैने भी देखे
पर चक-चौधाने वालो के बारे मे सुना ही
लगे हाथ तुझे भी सुना दू   ,

सो पूरा अमला ही जा पहुँचा
सजाव-पार्ले की डयोढी
रगारग सपने तो तू देखता ही है
तभी तो करता रहता है
गीत-ग़ज़ल के रागोलिये
तब उड़ा अपनी तीतरपखी को
देख कर आ बखाने तेरे आगे
किस-किस मनको-मखमलो से
सजा-सवारा गया है श्रीजी का सदन,
और लागत   लागत
सिर्फ पचास लाख रुपैये

सुनते-सुनते दातो तले आ जाए जीभ तो
अपनी लाडेसर लीलटास[1] पर ही
झापड़ झटकना,
अब थोड़ी देर तू यू ही छक
मै जरा उसके
जिसके यहा आने की खबर पर ही

गगासागर ही उतर आया
समूचे कलकत्ता मे–
'तोमार नाम भियटनाम
आमार नाम भियटनाम '
वहा भी रहा हो ची मिन्ह
नाम का एक महामहिम
एक पोटली लिए ही उतरा
हमारी इस बणी-ठणी[1] के हवाई टेसन पर
उसके 'महल' की
नकल टीप दिखाऊ तुझे ,

मै बदर बूढा हो जाए पर
छलाग नहीं छूटे उससे,
नहीं देखनी मुझे किसी महल की टीप
और न ही समझना तेरा भियटनाम
रही-सही दिल्ली दिखा
नहीं तो बख्श मुझे ,

मेरा अष्टावक्र क्या कहा तूने बख्श दू वह भी तुझे
अरे भाई, बख्शे तो वह
जिसके पास इफरात हो
चीजो की धन की किताबो की
मेरे पास तो तेरे सिवा
मरी अपनी देह तक नहीं
तुझे बख्शने का मायना हुआ
मेरा होना ही सफाचट
ना भाई, यह मुझसे नहीं होने का
किसी ने ऐसा कर दिखाया हो
तब मुझे बता वह टीप

1 राजी सवरी

दिल्ली देखने का मच[1] यू चढ आया है
चल फिर इस ही देखे ,

ले देख, यह रहा-
एस पी जी की हर घडी
खुली रहने वाली आख तले
एक साथ नेहरु-गाधी की धरोहर की
रखवारिन का डेरा
धरी रहे घेराबदी, घुसते रहे भीतर
'उसको लाओ[1] देश बचाओ' के नारे
मुट्ठी-भर नास्तिक भी
है तो रहे ओने-कोने मे
पर सौ मे पिच्यानवे तो मूरतपूजक ही,
लग रहा है तो तुझे
डूबता ही जाए है महासमद मे देश,

शास्त्री भवन-कृषि भवन चल
हर-हर कमरे मे
गूगी फाइले देखती
खाली कुर्सियो मे आत्माए बिराजे
मगर छते गवई केसीनो से गुलजार
दिन तो दिन रात मे भी वारे-न्यारे,

यह देख, अपने सासदजी की कोठी
इत्ती बड़ी इत्ती बड़ी है तो
पर एक बार झाक-- एक कमरे मे
निरे अकेले केवल टेलीफोन के साथ
बाकी सब मे और कोने-पिछवाड़े तक
ठसाठस 'गेस्ट' कान इधर कर,

---

1 जोश

दूसरो से मत कहना--
बासेवाला[1]-धोबी अड्डा तक 'पेइग' समझा तो।

सोचू, किस नम्बर से दिखाता चलू
यह तो है ही अजब-अजूबो से भरी
हा, भाई, तू बोला था न
एक शब्द बख्श यही न,
इसी पर याद आई
यहा की एक छोटी सी
मगर निहायत ही बारीक बुनावट
वैसे तो हमारा देश ही
जागते-सोते-उठते-बैठते
नया ही बुनने के जोम मे रहे
मगर अपनी इस सिरमौर के
बुनते रहने के नखरे ही निराले
चल 'अशोक-यात्री' से
उस ओर मुड़ कर पहुँचे वहा,

लेखक होने के नाते यह तो जाने ही
अपनी इस धरती माता के
क्रोड़ मे ऊपर-बाहर तक
जरायुज-अण्डज-कीटज-ऊष्मज ही प्रगटे
ऐसे जीवन्त जगत मे
व्हेल हो या हाथी-चीटी-मच्छर
सुर-असुर हो या मनुष्य
सबके लिए एक ही अटल सत्य
देर-सवेर हर एक को
यहा से कूच[2] करना ही पड़े,

---

1 ढाबेवाला 2 प्रस्थान

हम-समाज की ही वात ले
मानलो, फलानसिहजी या
फत्रेखाजी अलविदा हुए
अव जड़-देह को रफा-दफा
जो रहे, वे ही किया करे
उनके लिए कब्रिस्तान
तो मुझ-तुझ जैसो को नीमतल्ला,
अपने शहर वाले
गीता-ज्ञानी मोहताजी तो
'मासा खाय जिनावरा
महामहोच्छव होय' की तर्ज़ पर गए,
अपने पारसी भाई ऐसे ही जाया करे,
फिर गगा-गोमती-सागर पासगी
साधुओ के ठाठ ही निराले
उनकी तो बैकुठी सहित
दैहिक इतिश्री सिर्फ जल-दाह
और ऐसे-ऐसे महात्मन भी भैये
न दूठे[1] उन पर यमराज तो
वे-तार से पठा दे सन्देश–
'तेरे' आने तक यह पचका सथारा[2]
अब कोई कैसे ही ले जाए कुछ भी करे
फिर किरासन-गैस-दाह की
बात को तेरे सामने क्यो लम्बान दू
अपने इस बास में तो
हर आए दिन की वात

एक भाई ऐसे भी सोच गए
भरोसा ही नही रहा उनको
अपने परिवार वालो पर

---

1 प्रसन्न होना 2 अन्न जल त्याग कर मृत्यु का वरण

सो दोस्तो के नाम ही लिख गए
अपना अन्तिम इच्छापत्र
उनमे से एक सग्राहकजी भी,
मेरी ऊठ-बैठ तो तू जाने
ऐसो-वैसो के साथ होती ही रहे
झटकली उनसे फोटोस्टेट
भई वाह, सुनकर तू भी ज्ञान-वृद्ध हो-

'कौन कब जाए, क्या पता
पर मेरे सामने तो तू नवला ही
सौ सावन देखे तब तक मै
हरफो मे तो जमा रहू तेरे पास
विज्ञानसम्मत तो अग्निदाह ही
मगर मेरी चित-देह को लिए
मौन मिछिल[1]-सा ही चलना
जाने किस पच-प्रधान ने
माड दी बही मे लीक-
नत्थूसर चौभाटा न लाघे लड़की
अब इतना सयाना तो है ही, समझ ले
लीके छोटी-बड़ी हुआ ही करे
सो मेजर दीनू! अपन सा'ब को
पहला कधा लड़की दे
और लापा[2] भी उसी के हाथ से
फिर फटाफट पानी की बौछार,
बची-खुची राख-धूल
हर की पौड़ी - कपिल सागर मे नहीं
फूलनाथ के धोरे तले
फैक आए कोई नतिनी
दाम लगे न फिटकरी

1 मौन यात्रा ■ आगुन

रंग चोखा ही आवे
यह तो कर ही देना धूर्जटी

सो सृगनाथजी, जब छोट शहर म
सोच की ऐसी घुड़दोड़ चले
तब इस जेरी विश्वपुरी म
चला करती रेस की
एक भी लगाम थाम दिखा तो ,

नहीं न, तब देख यहा का यह फोटू–
यह भाई चलती फिरती गुड़ियाओ से
गुटर-गू करने का बेहद शौकीन
चाबी भर-भर इधर से उधर
ऊपर से नीचे चकराता
थके ही नहीं शौक पूराता
पर देह तो देह ही वह भी गुड़िया की
होती ही है मरमरी
थक अटकी वह फिरकनी
जोम-जाया यह कैसे सहे ?
भभक उठा महाबली का पौरुष-
सौरव मोशाय के छक्के की
गेंद तो फिर भी मिल जाए
पर यह भाई तो अद्धा-दस्सा ही मारे
यSSSS निकाल फैंकी गुड़िया की चाबी
रह गया हाथ मे केवल बल्ला
अब क्या करे इस लमलेट को
कैसे तोके कैसे करे बे-निशा
खड़े-खड़े ही पूरी उलट-पलट गया
देह-सलटाव की विध
पर एक भी रास नहीं आई भाई को

जोकी सा उछल
बैठ गया अपने 'बाज' पर
अब तो वह आगे और हवा पीछे
क्या कहने मार ही लाया लीक पार से मीर--
खच-खच खट-खच-खच
बना ही लिया चार फुटी खीरा ककड़ी का
ठीक-ठाक सलाद, भर लिया टिफिन
और पहुँच गया 'बागीचा ढाबा'
हगड-हगड सुलगते तन्दूर को
भेट कर झाड़-पोछ लिए हाथ

ऐसा कुछ तो नही दिखाया मैने
जो यू सिर झुकाये रहे तू
फिर पूरी दिल्ली कैसे देख सकेगा?
तू तो हूणिये वाला हुकारा देता चल
ऐसा क्रिया-करम वही करे
जिसकी मा ने खाई हो
घी-पकी सूठ-काली मिरच
मुझे तो बता ऐसी हुतात्मा
जिसकी याद मे दिया जाए
ऐसे वीर बिकदर को पहला इनाम ,

''अपने इस मे को ऐसी ठडी रसमलाई भी खिलाया करते हो
अष्टावक्र' तब दूध तो शायद राठी गाय का ही लाते हो,
पर मैने तो सुना, यह नस्ल तो राजस्थान-हरियाणा मे
आई-गई ही हुई ,

न सही तुम पाक-हस्ती तरला दलाल के नाते-गिन्ने मे
पर हवेली वालो के रसोवड़े मे तावणियो[1] मे
गट्टा-पापड़-अगूर-अनार तो बरसो छोंके और
बादाम का हलुआ-मोगर तो दाजीश्री का
रोज का सिरावण[2], खूब ही बनी आज की रसमलाई,
चखाने के लिए थोड़े कहू, तुम तो जानो, मिठाई से
खास परहेज रखू, वह तो घर के प्रिंसीपल-मॉनीटरजी
की डपट से डरा-डरा भले ठूस लू ,
पर भाई ऐसी ठडी-टीप तो डीप-फ्रीज मे ही होती है
बस मुझे तो वही दिखा दो ,"

अष्टावक्र यह यह क्या बोल रहे है दादू!
राठी गाय दूध ठडी रसमलाई
डीप-फ्रीज वह भी इसके लिए
ऐसी जहमत उठाऊ ,
आप तो टेढा कभी बोलते ही नहीं
फिर आज यह कैसा गज़ब ?

"तुम तो अपने इस अकेले मै के ही अष्टावक्र पर मै तो
इस चलायमान जगत का निपट दिगम्बर होकर भी
छैल छबीलदास तुम्हारा बडेरा भी ,

तुम तो इसके सामने हर पल वक्रतुण्ड-महाकाय रहो,
याद करो, मै भी तो बैठा करता हू प्रेस क्लब मे
पैरेबल्स के 'लक्खीबाबू का असली सोना-चादी की
दोकान' वाले शास्त्री के पास, उमड़ ही आया
आज उसका असर, हो जाए हम दोनो मे अच्छा-खासा-सा
एलेगरीकल एपीसोड "

---

1 मिट्टी की तपेलिया 2 सुबह का नाश्ता

अष्टावक्र एपीसोड एलेगरीकल
वह भी आप मे और मुझ मे
नही, महाबली नही, मै तो इसका गिरिटया[1]
और आप आप तो इस जगत के
मूर्त-अमूर्त दोनो एक साथ
शुद्धाशुद्ध सकाल ,

"ठहर अष्टावक्र! पहले इस काल-सकाल को समझे,
अच्छा यू करे, 'स' को हटाकर 'अ' लगादे, तब इस 'अ'
का अर्थ 'न' ही हुआ न!

यहीं मै कहू कि यह 'अ' और 'स' दोनो ही
चालू आहे माथे का फलन, इससे पहले किसको
हुआ अ-काल और सकाल का बोध? यही रचे
आज यह गया यह दूजा आज वह आ रहा फिर ,"

अष्टावक्र सही, आवाज़ो के अर्थ इसी से
गति-आलेख-अक यही तो टीपे
यू समझा-समझा सा
कहू इस चनणा-प्यारे रामू[2] से
मत ठस-ठहरा रह इस टीले पर
देख क्षितिज छूते इस तरणताल को
सुन, लहर-लहर के झाले[3]
तैर इसी मे मुक्ति इसी मे ,

"तैरे न तैरे पर डूबना तो इसी मे ही इसे, इसके सिवा कहा
मिलेगी इसको ठौर? पहले इसको इस भवसागर की
सरचना बतलादू फिर तुम जानो ,

---

1 चौना 2 राजस्थान की प्रेम कथा 3 मनुहारे

सुनो शब्द के धारक! लोकायतो-चार्वाको-मार्क्स और
एंजल से भरे-तरे इस जग को यू समझा है

आगुन-पानी और पवन-माटी मे हुआ द्वन्द्व, द्वन्द्व ही गूज
हुआ यह अच्छर आकाश, फिर भी मथन निरन्तर
इससे ही सश्लेषित धरती, धरती पर आकार, और-और
आकार, प्रतिआकार, बिम्ब और प्रतिबिम्ब लगातार
शोधन का प्रतिफल-झीनी-झीनी-सी प्रकटी-अनप्रकटी-
प्रकटी मानवीय चेतना, इससे ही परिभाषित गत आगत
और अनागत, यह बिम्ब स्वय को सुनते-सुनते
कहे हम-रूप बिम्ब से-

मै शब्द-पुरुष तू वाणी, निरख अपनी यह देह-यष्टि तू
पखुड़ियो जैसे होठ कपोल-उषा-रग धरती
ऊपर ढरे क्षितिज जैसी उन्मीलित पलके, रचित
तुझी पर दो मगलघट, फूटे सूर्य-किरण सी धारे
घसड-चसडता जिनको मे हो गया आदमी
और तू मुझ से अलग-अलग-सी औरत !

बस, अष्टावक्र! यहीं आदमी से छूटा वह सार
आज तक नहीं लगा है हाथ, सच तो मेरे तर्कतीर्थ
यह-वह सार निमिष-लव-वेध इसी की आखो आगे,
पर लेना चाहे तब तो, न लेने मे मिले पौरुषेय अहम को
ओवरडोज सप्लाई और जागते-सोते मे स्वामी सुख की
प्रतीति अपने इन दो सुखो को अजर-अमर
बनाए रखने कुछ कौतुक तो ऐसे रच दिए कि
मातृश्री के लिए आज और आगे तक के अटल सत्य ,

अव्यक्त-अगोचर को लगातार व्यक्त करती आई
इस महती चेतना के जटिल ततुजाल मे उग आया कैक्टस—

अपने होने का मै स्वय ही कारण, भले इसकी
गर्भस्थली मे स्थापित पर यह भरणीय तो
मुझ से ही मेरी भार्या ,

खो न जाए, चोरी न हो, चरवाहे बनाए ही पशुधन की
हर इकाई पर सलाख से निशान, हवा से
ठर-सूख भी जाए पर इस मरजादीलाल[1] ने
धोकनी की फू-फू से लालचुट जीभ की चिमटी
कब चेप दी औरत के मनसा ललाट पर कि जन्म से
मरने से पहले तक धुखे धुँआए ,

ऐसी ही किसी धुँआस-कथा का तोड़ा सुना रहे न
तुम अपने इस मे को, वह भी बर्फीले-क्यूबो मे
जबकि मै तो कह आया पीड़ा का अहसास सिर्फ
जीते-जी का, तब हुई ही नही उस सचला से
बने पैकेट को तन्दूरी-दाह की प्रतीति
वाणी-पुत्र ने चिमटी तपा चेपी, तुम भी तो वाक-जाये,
चिमटा तपाओ, बजा-बजाओ, सोच की
उस तलहटी को दाग आओ तुम ,"

अष्टावक्र मै तो इसकी इस कुई मे ही
छटपटता जीऊ और आप कहे
इसकी तलहटी मे जाने को
पहले तो उतरू ही कैसे, सीढी ही नही
रपटता-घिसटता उतरू भी
नीचे तल नहीं दलदल हो
तब मुझे उबारने कौन आएगा ?
नहीं दादू, ऐसी कड़ी सजा तो न दे
वह तो जोगे-सजोगे यह याद-खोर हो जाए

1 मर्यादा

बस, आ पडू बाहर
और भरने लगू खुद मे ताज़ा हवा
पर इसे उस ऊपर से तार जुड़ाये देखू
बात पर बात झटक उतारू नीचे
दिखाने लगू इसे इतना बड़ा आज ,

आप भी तो कितनी देर से यहा, सुना ही,
किस्सा तोता-सलाप चकवा-चकवी,
और न जाने कितने-कितने
ज्ञान-बाहुबलियो के परचे बाच गया
पर यह तो मकराने के मारबल का शिवलिग
और मै इसका बैठक-बाज भगत
दूध-पानी ढारता थक कर
झाड़ने लगू बोल पर बोल
तब आप ही टोक दे- 'यू मत हडका
पसर गया तो धधे लगाना
भारी पड जाएगा तुझे
और अब आप कहे जा तलहटी मे
लगा आ वहा लापा'
फिर तो सौ टका फबा ही
यह तो सीधी हिंसा हुई भ्राताश्री!
मै तो अहिंसा को ही परम धरम मानू,

''माना, तुम इसे आसपास का ही नहीं दूरदराज तक का
आज दिखाने पर तुले बैठे हो पर जा धस कितना बताया?
याद करो, अतिरथियो से जा भिड़ने, पीले चावल तो
नहीं भेजे थे न किसी ने अभिमन्यु को, रास नहीं आया
उसे अपने दादाओ-काकाओ का गोरखधधा, न लौट
सका साबुत मगर व्यूह को तो खागा[1] कर ही दिया ,

1 खडित

सुनो ध्यान से, तन्दूर-दाह की खबर ने ही
लाय लगादी मेरे पूरे घर मे, बुझाते-बुझाते मेरी तो मेरी
पडौसियो तक की झुलस गई पोरे, और तेरा यह
निपट जगखाया दरवाजा।

इसे यह बता– जिस आज को यह अटल समझ
बैठा है न, दरअसल तो बोटेनिकल गार्डन वाले बरगद
का लक्कड-दादा है जिसके नीचे पौधा-बेल
तो क्या कीकर-खेजडी भी न फूले-फले ,

एक बात और समझादे– इस धरती पर आदमजात की
समझ के पहले दिन से इस क्षण तक दो ही
परम धरम रहे है जिसे तुम अभिधा मे नहीं
आपातकाल की कविता मे समझो-

हद तोड़ अधेरे जब
आखो तक धस आए,
जीने के इरादो ने जगल सुलगाए है

जब राज चला केवल
कुछ खास घरानो का
कागज के इशारे से दरबार उठाए है

दिखा इसे माटी-मा का कलेजा जकडे बैठी जड़े और
थमादे हाथ कुल्हाडा, करे खच खच फिर सम्हला
आरा, धरती से एक इच ऊपर तने पर चलाए
चलाता ही जाए और सुनता भी जाए भीमसेन जोशी को-

जिन हाथो मे बदी कोटिजनो का आज
लेना ही है लेना ही है

अपने हाथो से रचना है अपना आज
दाताजी के हाथ मरोड़
खुली हथेली मे परोसले अपना आज ,

अब रही अहिंसा की बात, जैसी परिभाषा तुम सरका गए
वैसी तो अहिंसा परमो धर्म वाली महावीर-वाणी मे नहीं,
'धम्मम शरणम गच्छामि' के ध्वन्याचार मे नहीं और तो और
साबरमती वाले सत के वाड्मय का एक-एक पन्ना पलट गया
वहा भी नही आई आख आगे ,

फिर यह तू कहा से लाया, यह नहीं पूछ रहा, अभी तो मै
सवालो की काटा-बाड ही ऊँचाऊ तेरे सामने, पार
करते-करते मिल ही जाएगे उत्तर पर अभी मत बताना
मुझे, अपने इस मै-पुराण की शान्ति-शान्ति-शान्ति के बाद-

एक बार अपने देश मे रोटी और फूल फेरे गए थे न
यहा से वहा उससे जो हुआ, वह क्या था? लाट
के गजट-इतिहास मुजब सिर्फ 'गदर' ही? अपने
पचनदी जलियावाला बाग मे बटालियनपति
डायर ने तो आमीन-आमीन ही तडतडाया था न?
हर हिटलर के ' वी आर दी प्योरेस्ट ब्लड वी आर
बॉर्न टू रूल ओवर वर्ल्ड ' के ब्रह्मवाक्य से
दो-दो हाथ करते मित्र राष्ट्रो मे अकेले सोवियत रूस के
दो कोटि जन खेत रहे, उसे तो 'हाराकिरी' ही लिखे ? ,

घबरा मत बस एक-दो फुट ही ऊँचानी रही हा तो
आजाद हिन्द फौज को सविधान से परे का एक
आउट-फिट माने? और लोग मार्च के अभी तक के
सामने आये परिणाम पर कितना बडा मोमजामा डाले ?

तुमने अपने बचाव के लिए एक और हथियार लिया
चला नही पाये पर उठाया तो- 'सीधी हिंसा'
यही न यह चला हथियार और पत्ता वोSS साफ पर
छोटे। हिंसा की तो कई-कई किस्मे ईजाद की आदमी ने
और आज तक करे, गिनाने लगू तो पूरा एक दिन
तो गुजर ही जाए, फिर मेरा दिन तो निरा कीमती,
क्यो खर्च करू, पर एक किसिम तो बताऊँ ही, तब ही
तो निरा भोथरा होगा यह अस्त्र, इस आग्नेय अस्त्र
का सबसे बडा सच यह कि जब से चला यह, चलता ही
जाए, न लगी और न ही कभी लगेगी दुनिया के
किसी भी कोने मे इस पर कॉमा, इस सचलन के
हम परम विशेषज्ञ हमले भले किए हम पर दूजो-तीजो ने
मगर हमसे यह हथियार छीनने का साहस आज तक
किसी महाबली ने नहीं दिखाया ,

इस पाशुपतास्त्र का खुलासा करे तो महज दो शब्दो मे-
'वाणी-हिंसा , आवाज़ तो अजर-अमर, यह तो आज का
विज्ञान भी माने, हमारे लिए तो यह मन्त्रोच्चार। इसे
तीखी-मीठी, मीड-मुरकियो-तोडो से श्रोता तक
सम्प्रेषित करने मे बोलने के पहले दिन से ही सकल्पित,
इस हथियार से सरकारीकरण को फिर भी हम
'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति' ही कहे

आवाज के अ तक के भेदी इस अचूक से मरे-जले
कौन सवर्ण अदना-महामहिम एक भी नही,
शूद्र चाण्डाल और जन्म के पहले क्षण से मृत्यु
के पहले तक जलती हुई भी जिये एक अकेली
मदर इण्डिया फिर भी छातियो से दूध
झार-झार कर बनाए पुरुष को प्रतापी और यह
प्रतापी। कैसी-कैसी विधनाये माड-माड कर

ज़र्रा-ज़र्रा जर-जमीन का तो बनता ही रहा है
एकाधिपति, अपनी ही जानकी के भूत-भविष्य-वर्तमान
तक का विधाता, इतिहास की सारी सादियां
एक तरफ उलट दे और खोले अपने किसी भी
सूत्र-सूक्त-आरण्यक के पन्ने ले, मैं बांचू
वाणी-हिंसा के पुराण, इनके प्रथमदृष्टा-वाचक
ये, भाषा उनकी मगर लोकानुसरण इस गांव के
मुझ आजिये का सुनाऊँ तो ,

अष्टावक्र यह भी भली कही आपने
आप से आज की उस नींव और
उठाव को सुन-समझू तो
सुबह की चाय-सिगरट जैसा सच—
खुद को 'टाइगर ऑफ बंगाल' उर्फ
बीकानेरी प्रो रंगा का
ताजा संस्करण ही मानलूं
और लड़ जाऊं इससे ही नही
उस-उससे फैसलाकुन लड़ाई
मगर माफ करें बड़े भाई
यह जो है न मेरे बाहरवाला, सुने न सुने
मेरी तरफ से कोई गारटी नही ,

यह तो वह है न अपना कोड—
अ उ म इजीकुलटू
ब्रह्मा-विष्णु-महेश तो जाने ही
इनकी धातु तक पसार बताए
हां एक बात और इसके बारे में
'लोकायत' के 'ससोळाव'[1] मे तो
खूब ही तैरा है यह,

---

1 तालाब

मुझ से कहा करे-
'व्हाट इज डैड एण्ड व्हाट इज लीविंग
इन इण्डियन फिलॉसफी'
वाली झील मे भी डाइया लगाई है
जे आपसे आबड़-ताबड़ बोल गया तो
मेरी तो माटी ही बिगड़ी ,

''माटी इसकी बिगड़े या तुम्हारी, यह तो आगे देखना,
कह आया हू न तुमको, सबसे पहले तुम मेरे अशी
फिर इसकी राई-फुनगा, अब मत टोकना, सुन–
क्या-क्या नही कह गए श्रद्धा और इडा के लिए
हमारे प्रात स्मरणीय बडेरे, हमसे असमय ही
बिछड़ गए धूमिल को तो 'जिस-तिस की पूछ
उठाने पर मादा ही नज़र आई' या फिर 'दो-तीन
बच्चो के बाद हर औरत धर्मशाला' लगी पर
मैत्रायणी सहिता वाले ताऊ को ऐसी-ऐसी लगी-दिखी–
'औरत अशुभ है अर्थात पूतना है, कुबजा-मथरा है,
ठर्रा-व्हिस्की-जुए की लत है' और लगा
इस सदी के झूठ-कोहेनूर गोयबल्स के नाम
पर काटा 'औरत आठो याम बोलती झूठ की मशीन है''

आदमी से मिलता-जुलता कद भले हो औरत का
पर वक्र वाणी मे तो वह हिलता-डुलता बिछौना
नहीं, बेटे ही बेटे पैदा करने वाली फैक्ट्री और
जो न दे पुत्ररत्न या फिर बेटिया-बेटिया
,देकर जापा बिगाड़े तो निकाल फेको, पडी है
दूध मे मक्खी[1] ,

अपने गौतम काका तो यू शेखी बघार गए– नहीं है
सोना-चादी, रेशम-मखमल, कोई बात नहीं,
औरत, पशु और धरती तो है ही भोगो
जितना भोग सको ,

1 शतपथ ब्राह्मण आपस्तम्ब धर्मसूत्र

जो भोगे वही धनवान, हा इतना ध्यान रहे,
घर मे औरते पशुओ से कम ही हो, पशु-धन
तो नहीं गिनाया मगर मनु के वाडे मे दस
और चन्द्रमाजी के नोहरे[1] मे सत्ताईस तो
बता ही गए ,

दाए-बाए गर्दन तो गाय-बकरी भी हिलाये
पर औरत खटिया पर लुगदी बनने से
ऊँ-हू-ना-ना करे तो बृहदारण्यक उपनिषद के
परमब्रह्मनिष्ठ याज्ञवल्क्य जी की यह
आशुवाणी- उसे खरीद लो, फिर भी हा न भरे
फटकार कर डाग पर डाग[2] करलो वश मे,
पशु पर तडी सटकाई जाए तभी चले,
ये तो थोडे बाद के, इनके पहले ऋग्वेद दाजी[3]
नववधू को सास-ससुर, जेठ-जिठानी-देवर-ननद
की सम्राटिन बनाए, और कहा ऐसा सुख मिले
औरत को, सुख की मर्यादा तो फिर भी रखी
ही जाए सो इनका चौथा भाई[4] 'सूरज को
देखकर जैसे अधेरे का भूत भागे वैसे ही
बहुरानी ससुर-जेठ-काका-बाबा से भागे'
जैसी पाण खींच दे

यम-यमी गाथा, नाभानेदिष्ठ सूक्त का
बाप-बेटी प्रसग तो जगजाहिर फिर भी एक-दो
और आप्त-आर्षवाक्य ,

यह तो मनुष्य का ही मौलिक अधिकार, करता रहे
अपने ही हाथो खीची लीको को छोटा-बड़ा—

छुइ-मुइ सी भागा करे आदमी के घर मे पर
ओझरी भरी रहे तभी तो 'हे पति परमेश्वर'
भुक्त्वोच्छिष्ट वध्वैव ददात अर्थात झूठन से
ही पेट भराओ भोग्या का

1 पिछवाड़ा 2 लाठी 3 दादा 4 अथर्ववेद

फिर भी औरत और शूद्र को, कुत्ते को,
काले कौओ को देख लिया तो पाप-पुण्य का
ज्योति-तमस, साच-झूठ का मिक्सचर
हो जाएगा, बचना इससे ,

पर बचे कैसे ? यहा हमारे ऋग्वेदी पडित
थोडे उदार रहे– देह चाटने को लट-पटते
दिखे यदि जो पुरुष-देवता तो औरत
वैसे ही जा पसरे उसके आगे जैसे विश्वामित्र के
आगे नदिया बिछती जाए[2] ,

जो ना बिछे तो प्राणनाथ का अहम तो जगे ही जैसे
देह की स्लाइस बनाने वाले दिल्ली-पूत का जगा,
भले भेज दिया तिहाडपुरी मे, एक दशक तो
समय-प्यासी न्यायपालिका ही चाट जाएगी मगर तब तक
के लिए देह के साथ चाय-नाश्ता, टेमोटेम भोजन-लत्ते
सुरक्षित, ऐसे प्रयास मे जी मिचला जाए जो कभी
तो अस्पताली आराम का अदली-सहारा लिए खड़ा ही
रहे विधिपडित ,

अब हमारे जन्मजात घमडीरामजी चला ही दे तलवार,
पिस्तूल मच्छर-चींटी-कुत्ते या छछुदर, औरत पर ही
तो बग-सुता भट्टाचार्या के आपस्तम्ब धर्म-सूत्र के
पाठ मुजब ऐसे 'महापराधी' को भयावह-कष्ट-साध्य
एक दिन के उपवास की सजा ,

ऐसे-ऐसे बधन नायलॉन रस्सी के हो या कचे सूत के,
पुरुष-प्रभुओं को बाधे तो गए ही सो पाराशरेय की
भॉति हाथ ऊँचा कर बोल गए बोधायन मोशाय–
'साक्षी है सभी वर्णों के आप–पुरुष-धन'[1] धन से

---

1 खदिर गृह्य सूत्र 2 प्राचीन भारत समाज और नारी सुकुमारी भट्टाचार्य

अधिक स्त्री की रक्षा करना ही उचित ,' वोल,
है कि नही कोर्टमार्शली-भाषा ,

पर ऐसी कर्त्तव्यनिष्ठ भाषा के ईन-मीन वोल भी मुझ
जडमति को यू लगे गोया बुलवा लिया है सेठ तिलकदास
ने मुझे अपने दीवानखाने, वहा मडा हुआ है वडा सा
कवूतर जोशी[1] का म्यूरल, सामने मै घग्घू राजा!
सुना है, म्यूरल जे मॉडर्न हो तो घुन्न-घुन्ना आखो
देखा जाए, फिर समझा जाए, तव ही कुछ
कहा जाए उस पर जमी नहीं मुझे अपनी
यह ओपमा सो कर दिया अवाउटटर्न अपने
सोचश्री को, चलो चलो कही और ठौर ,

दो-चार गली-पार पर ही पाव जवाव देते से
लगे, तभी 'ठहरो वहुत दूर जाने की जरूरत नहीं,'
मुडकर देखा– राजशास्त्र और अर्थशास्त्र के
प्रचड पडित शिखाधारी चाणक्य ! हे महामना,
आप और मुझ धूपटिये तक धन्य-धन्य
हो गया मै तो, आदेश करे गुरुवर, अपने सिर धारू
नहीं, आदेश-आज्ञा कुछ भी नही, अभी तो मै
कुछ क्षण-भर तक का उद्‌गाथा और तुम भी चेहरे पर
विन प्रश्न-भाव के श्रोता "आत्मान, सतत,
रक्षेद्‌दारैरपि धनैरपि "

सरल हिन्दी करने शब्दकोश तो पलटने पडे ही, खर्च
हुआ पूरा-पट एक पन्ना- *आत्मान* रक्षेद्‌दा
रक्षा हे पौरुपेय! तेरे पास इतना विशाल भुवन,
इसमे पण-भण्डार इसमे भी चलता-फिरता दैदिप्यमान
यह स्त्री-रत्न! इस निरतर चलनशील जगत मे
नाना विध लुटेरे भी रहे, कोई धान लूटे, कोई

1 चित्रकार सुरेन्द्र जोशी

कुछ-कुछ लूटे और कोई-कोई तो औरत-रत्न-लुटेरा ही
अव तेरी इसको ही आन पहुँचे लूटने, तव डरना मत,
धन के लोभ से मत वधना, सरका देना थैलिया
फिर भी न रीझे तो इस औरतिया को भी दे देना
मगर अपनी तो कर ही लेना स्व-रक्षण ही
श्रेष्ठ धर्म, जो चूके वह पापी ,

अपनी सम्पूर्ण चेतना मे रमाली कौटिल्यीय भभूति,
ऐसी शिक्षा को आल्मारी मे सजी किताव-सा देखे
यह परम अज्ञानी, सच्चा ज्ञान वह जो भणा जाए
और जीवनपर्यन्त गुणा जाए, कर्म-निष्णात योगी
को तो पितरो की सौगध, आचरण मे ढालने मे
न कल कमी आने दी और क्या मजाल जो
आज भी आ फटक न दे, धुरधर चाणक्य-शिष्य
मनुष्य सुख की सेज तो वनाये ही रहे औरत को,
जव-तव दासी और स्व-यश-स्व-रक्षण को
आसदी को पक्का रखने की जरूरत आन पड़े
तो चीज भी वना ले ,

फिर एक ही चीज की कई चीजे वनाने का
नये से नया नुस्खा तो युद्धूवक्सा रोज वताए यह तो
तुम भी जानो, चीजे दी ही जाए दान-दक्षिणा मे, उपहार मे,
ऐसा तो राजे-महाराजे-धन्ना करे, हा मनसा-देहा उधारी
मे डूवे तिर आने के लिए भी दिया करे दक्षिणा,
अन्नदान-वस्त्रदान, स्वर्ण-रजतदान और
गाय-घोड़ादान के सग-सग औरत-दान भी,
इस सातवे दान की एक कथा ही सुना दू, वैसे पिछले
वर्ष ही दी दाक्षणात्य-श्री की 'भूमिकाजी'' ने,
पढते-पढते आखो आगे गरम-गरम ओस, ओस से
टप-टप पानी और दात किटकिटाऊँ कि अन्तिम पृष्ठ
लेखिकाजी पड़ जातीं सामने तो सौगध तीन बेटियो की
मटरू मा की एक भड़काऊ सवाद तो कर ही जाता ,

फिसल ही पडी 'सौगध', डी-क्लास तो होते-होते ही,
फिर मै भी आदमी का ही यथार्थ खैर अभी
तो तुम अथातो हरिवशपुराण के पन्ने वाली सुनो–

एक हुए विश्वामित्र नाम के महातापस, सर्वाधिक
व्यजित-व्याख्यायित गायत्री छद-मत्र के
प्रथम प्रणेता-दृष्टा, और दूसरा स्वर्ग-'मेनका'
जैसे अजब-गजब किस्सो के महानायक, साथ ही
यायावर ज्ञान-गुरु भी,
इसी महामनीषी के परम शिष्य रहे नमनीय गालव,
भाई! बालहठ, राजहठ, त्रियाहठ और जोगीहठ
तो कई-कई बार पढे-सुने पर इस पन्ने पर मडित
गालयहठ तो मार्कर पैन से लीकने लायक,

आकठ विद्या-कर्ज मे डूबे ये हठश्री उबरना भी तो चाहे–
साष्टाग धोक, गुरु-दक्षिणा क्या अर्पण करू देव?
गुरुदक्षिणा! नही गालव, तुम तो
मेरे परमप्रिय शिष्य पर हो तो साधारणी ही,
कुछ नहीं चाहिए मुझे तुझसे फिर मै तो
राजाधिराज कुशिक-कुशाश्व का पुत्र! यह तो
फेर दिनन का, सो हार बैठा वसिष्ठ की गैया से
सो धिक् बलम क्षत्रिय बलम कहकर पहन लिया
ब्रह्मनिष्ठ का यह चोला, जाओ, रचो अपना ससार ,

नहीं, गुरुप्रवर नही, आपकी इस ना से तो
राज-राजन्यो को श्राप का धत्ता बताने वाले
शिष्य-वर्ग मे मेरी तो हेठी हो जायगी, आप यह भी तो
विचारे– कृष्ण द्वैपायन व्यास के पड़दादा और
सूर्यवशी राजाओ के प्रधान पुरोहित से
सप्तमण्डलीय ब्रह्मऋषि का पद झटक लेने वाले गुरु का
शिष्य होने का मेरा भी तो अपना स्व गुरु-ऋण से
उबारे मुझे आज्ञा करे गुरुदेव

---

1 श्री गुलेरिया राजेय राघव

मेनका-रसिक तापस मे राजकुल का अहम् फिर भी
कुलवुल-कुलवुल ऐसा' तव जा, मेरे लिए
काले कान वाले आठसौ घोड़े ले आ ,

जैसे तेरे इस मैं को गणित सीखते-सीखते भी जीरो ही मिला
वैसे ही मागते-मागते हाथ तो खाली कठरी' हुए ही
जीभ भी सूज गई, अव क्या करे प्रजापति तो
नाभि फोड़कर लहर गई नाल पर उगे कमलासन
ऊपर मान और बमभोले भभूतनाथ 'अवूज माड मे
घोटुल-था थई-थईथा²', जस-तस दिखे
लिछमीबाई से पाव चपाते विष्णुजी, रीझ गए
गालव के यशोगान पर आनन-फानन
पठा दिया श्री ययाति के दरबार हॉल मे ,

याचक ब्राह्मण' दाता राजा लेकिन फटी जेब का
निगोडी ना निकले ही कैसे मुँह से श्यामकर्ण
घोड़े तो हेऽऽ हेऽऽ पर यह लो मेरी अछर-यौवना बेटी,
जो भी मागो, वह पूरेगी, आशीर्वचन दो मुझको ,

गद्गद् गालव ने सबसे पहले हरीश्व को
सौपी, फिर दिवोदास के बाद उशीनर को अर्पित की
तीनो ना-पूते राजन्य माधवी भोग हुए पिताश्री
मगर घोड़े तो फिर भी छ सौ हार-हूरे
जा बिछे गुरु-चरणन मे गालव देखत ही
खिंच गए गुलाबी डोर तापस की आखो मे—
आ री यौवने एक पुत्र-रत्न दे दे मुझ को भी, इसके
सिवा और क्या करती अवला ?

इस पर भी पर पुरुषागी-अपाचारिणी पर दण्डादेशो की
वह कीलाक्षर भाषा' पत्थर-मार मौत भी पढते-पढते
ही जा मरे शर्म से, मै अपने इस विराट की लिपिया-बोलिया

1 लकड़ी की थाली ■ मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्र मे युवा युवतियो का उत्सव

समझ लू, यही वहुत है पर तुम तो कर ही लो एक और
मानुप-जन्म की कामना, आ जाए काम इस जैसे
मुखौटिये आज को उघाडने ,

और सुनो अष्टावक्र! ऐसी कथाए घू-घू से शीतल
कक्षो-झूपो मे भुर्जपातो-कागजो पर खर्र-खर्र
नही, नीम-पीपल-शाल-देवदारुओ से छवयित
आगनो मे श्री गुरुमुखो से गायत्री-अनुष्टुप-जगती छदो मे
आरोहो-अवरोहो गूजी, सुन-सुन गोखी शिष्यवृन्दो ने
और बजवाए ढोल-मजीरे गुरुजनो के– खुद के
गुणाधिपति होने के ,

ऐसे मदारियो-जमूरो के तमाशो के वीच ही ऊधम
मचाती रही कभी विश्ववारा-लोपा-अपाला-घोषा,
शूरवीर वागीश्वरो के तरकश पर तरकश खाली
करवाती रही अपिशिला-वाक-गार्गी-मैत्रेयी
और यह मुद्गलिनी-विश्पला-शशीयसी तो जा
उतरी समरागण, तभी झख मार टीपना पडा पडितो को
'स्त्रिय सती ता उ ये पुस '' औरते होकर भी
अनोपमेय पुरुष रहीं वे ,

जितने शब्द गिनाये तूने-मैने अब तक, वे सब
मेरे ही उनके है जिनको विवश निगल
सावेग उगलना पडता ही है तुमको-मुझको
हम दोनो की जाया को, क्यो-किसलिये नकारू
मै तो उनमे ही उनका वशी जो चिति मे आते
अन्तर पर अन्तर वतलाते जाए ,

अभी-अभी जो बोल गया आरण्यक अटपट,
प्रथम अन्तत केवल सच ही लेकिन दो की यह
आभासी-भाषा दी तो मेरे ही पितरो ने,
अव जो धुआ-धुआ-सा सोच, वही बखाने, उस पर

छींटे पड़े न पड़े मगर जो रगड़-रगड धो-पोंछ
उजाले, उस पर जाने कितने पड़े चकत्ते ,

होता ही आया है ऐसा पहले, अब भी, मगर
नकार गिनती के तब भी, इस पर भी
लगते रहे सवाल पर सवाल, ऐसे ही मे तुम-मे
बज-बज कर बोल लिया करे— उठे, उठती ही जाए
इस सहस्त्र सुपर्णी हस्तामलक विधाता के आगे
नकार-नकारो की सचेत कतारे, देखे कब डाले
यह अपने सोच-कुम्भ मे अमरबेल का बीज—
हुआ नहीं, होगा भी नहीं कभी मनुष्य बिन इडा
और इड़ा भी मनुष्य बिन ,

हा, कारसेवको को पठा दिया है न्यौता— हर दिशा-कूट
से पहुचे, भरदे रामलला की अयोध्या नगरी,
हरे-पीले जै-जैकारो से कभी यह नगर तो
कभी वह गाव भरवाने वाले लफ्फाजिये यह तो
भूलते ही रहे है कि हर स्त्रीलिग-पुलिग कारसेवक
गजरदम पतुआभात-लका[1] या सोगरा[2]-प्याज
का पूरा ससार ही अपने मे उतार कर
निकला करते है अपनी अ-जुधियाओ से

तुझे कुकुमपत्री नहीं मिली, कोई बात नही, मेरे पास तो
परमानेट पासपोर्ट-वीसा, अपने सतीश ने तो बिना
छदाम एक बार ही सैर की दुनिया की मगर मे उड-तिर
या फिर धरमजला-धरकूचा पहुँचा ही रहू
ससार के हर चौराहे-नुक्कड, यह बात अलग कि
टुकुर-टुकुर ही देखा करू पी एम हाउस-निलयम, पर वह
तो लला का घर और तुम तो साच्छात मै, पहुँचना है तुझे
मगर अपनी हम-रूपा के साथ, हा जाने से पहले
खुली छातियो पर चिपका लेना यह तख्ती—

1 तैत्तिरीय आरण्यक

सबसे पहले तो विस्फोट हुआ था, फिर एक
दहकता गोला, उससे धरती, जिस पर जन्मी
सिर्फ स्वराती देहे इसके बाद सूर्य-सवर्णा जाये
स्वर-व्यजन सधित शब्द-धारिणी दो देहे
होकर भी हम एकोहम। हमारे बाद हमसे रचित
यह ईश्वर-मूरत, थाली-धोती-भुवन, तीर-तोप,
मीडिया-उडती-तिरती लोहे की चिड़ियाये ,

पढवा देना— और रचा जाना है जितना-जितना
जो भी, वह भी हमसे, इस अव्यक्त-अगोचर से
बनते पिण्डो से भरे निखिल मे निरे अनूठे
केवल हम दो ही कारीगर।

अच्छा छोटे, चलता हूँ, धरती ग्राम की अपनी
राजधानी के ठडे शवागार मे राहुल-राधा की
लुब-डुब सुनता जा पहुँचू खाडी मे, देखू, क्या
पकवान लिये जा रहा है 'वाशिगटन'
सद्दाम हुसैन का दस्तरखान सजाने ?

सभी मदरसे बद कर दिये है काबुल मे,
पोथी-छापे पर बदूक तनी है, कैसे भेजू
मै अपनी सलमा को खडिया-पाटी ?

कब से सोचू, चश्मे की जुगाड़ कर भेजू
खोजबीन करती रहती ससार सभा को,
देखे तो वह— कितनी-कितनी आखे
तरस रही है किसकी खातिर ?

हा, कहन-कहन की अपनी झोक मे तुमसे
यह कहना ही बिसरे जा रहा, ले आया है
सपनो का उडन खटोला चचा चिदवरम,

---

1 लका 2 सोगरा

सम्हल बैठियो, हवा झपाटे मारेगी ही,
एक पाव मूड़ी रख लेना, पता नहीं, कहा-कहा
कितने दिन फिरे उड़ाता ? सपनो के समदर का
तो गोताखोर हो ही तुम, ऊपर की हवा मे सास
भारी पड़ती लगे, खुली आखो लगा जाना हवाई-डाई
चिपका ही लेगा तुझे माटी-मा का चुम्बक अपने से ,

और हा, कहते जाना घर की सारजट से— भले
छू-मतर करती जाए कुछ भी यह सरकार बहादुर,
मै तो कुशल-क्षेम लूगा, दूगा भी, चौकस रहना,
मत चिता करना, बहलावो से भरी पोटली तो
लेकर ही लौटूगा मै अपने अन्नू-अप्पू की खातिर,
भले बुझे बाहर का, झोक जाए कोई पानी ही,
पर अपने भीतर के चूल्हे को दे-दे घास
जलाये रखना जलाये रखना ,''

अष्टावक्र कहता-कहता चला गया वह
यही समझे न तुम! नही बधु नही
ऐसा न हुआ और न ही होगा
वह न छूटता है न छोड़ता है
वह सिर्फ जुड़ता है और जोड़ता है,
अरे मेरा बडा भाई तो
त्याग बागा, पहन लगोटी,
अलख निरजन बजाने वालो तक को
हँसता-हँसता दे दिया करे गस्से ,

कहीं नही गया वह
यहा है वहा है मुझ मे है
फिर तुझ मे तो हुआ ही
फिर भी तेरी समझ मुजब
एक पल मानलू, वह गया भी

मगर कहा थमक कर,
क्या सौप कर
अगारो सी दिपदपती यह तख्ती
भले दूर के पर रोटी के चदोवे ही तो,
ऐसी-सी ही कोई धरोहर
आदमी को परोटने की यह भाप
सम्बध-समझ की ऐसी महक
खोजता रहा है न तू
नही मिली तो बैठ गया
अपनी इस सूल मे खोजने
भाई मेरे यह सब तो
इसको छानने से मिले
देख तो, इतने बडे काले तवे पर भी
गुलाबो-सी हँसती अनुसूया ,

इस इन्द्रधनुषी विराट मे
तुझ-मुझ जैसो की
बनती भी है कोई नियति
तो बस इतनी ही कि
रचना और ध्वस का
लेने और देने का
बनाते जाए तलपट और रखते जाए
एकाधिकार पर होती रहती
छिटपुट काट-छाट से चिढ-चिढकर
सिर्फ लुटेरे बनते रहने वालो के आगे
और अब क्या कहूँ तुझसे ?

मै

और कुछ मत कह अष्टावक्र'
जब आख खुली तभी सवेरा
अब जो चल ही पड़े,
सोचता हूँ, बड़े भाईसा

पहले ही बोले होते
कब का जान गया होता
जड़ो मे ही रही है कल्मष
तभी काले ही काले उगे-पके,
वेलटीना-टहलियानी जैसे
पोशाक-महाप्रज्ञो की छायाओ मे
दिखे निपट नगा,
तभी इसके लम्बे-लम्बे हाथो से
मिठाइयो-केको-चाकलेटो की
बिछाई जाती हर बिसात थू-थू कड़वी ,
और नियति यहा तक चल आए
उदभरी महागण ने भी नही मानी,
खा-पचा कहता ही जाए—
और बना जितनी बना-उगा सकता है
तू थके परोसता या मै !

इस महानायक कामेती' का अशी मै
अब तो यू कहू-
बलिहारी गुरु आप की
जो दिखा दियो मौनी को
सत-शिव-सुन्दर आज,
इस नटराज की गमक-धमक
सुनते-सुनते ही लगा
अभी-अभी मै फिर जन्मा हूँ ,

बाये हाथ मे कसली है
मैने पिता-परम्परा की छड़ी
ठक-ठक करता पहुँच गया हूँ
मै पहली चटसार
और सीखने से पहले ही
बोल गया हू खरी खड़ी मे
सोच-कर्म-निष्णात गुरु से-

सहनाववतु सहनोभुनक्तु
सहवीर्यम करवावहे
तेजस्विनावधीतमस्तु
मा विद्विपावहे
कर भी दिया अनुवाद–
हे मेरे आगीवान[1] तुम से
इसी अर्थ मे लू और दू भी ,
मौनम स्वीकृति लक्षणम
उठा लिया है आपके सामने पड़ा
अपना दीक्षान्त पत्र
जा विराजिये मेरे भीतर,
ना ताला, ना चाबी
और किवाड़ वे रहे पिछवाड़े ,

चल भी दिया हू यू बाचता–
नही बना है ऐसा तलपट अब तक
न बनाऊ न ही बनने दू
इस, हा इस क्षण से
हर एक रचित पर
रचना के सपने पर
अतस छपे छपे हस्ताक्षर–
अथातो प्रथम
अथातो प्रथमोध्याय हमारा।

* * *

1 कामेती

राज समाज धर्म और अर्थ के तंत्र अपने उत्स से ही अपनी बुनावट को यथावत रखते समय समय पर शुन शेप के परिणाम उगटाते रहे है लगे टगे विश्वामित्र भी उपजे ही है।

इन चारो सत्ता तत्रो का ही पिता का सत्ता रूप नचिकेता और अष्टावक्र भी बनाते रहे है ।

पितृ सत्ता से मुचा-टूटा अष्टावक्र सत्ता के रूपो प्रतिरूपो का निस्सग साक्षात्कार करता है। वह घात प्रतिघातो को झेलते हुए समझ लेता है कि उसकी मुक्ति इन से भाग कर किसी प्रकार के एकान्तवास मे नहीं उसके अपने होने का सार्थक्य इनसे लगातार सवाल करने में है इनसे झूझने मे है और और रग्गे खाने मे ही है।

इस रचना का अष्टावक्र विराट पुरुष को बीच मे रखकर इकाई मैं से भी यही कहना चाहता है कि वह अपने चारो ओर बुने हुए जजाल से घबराये नहीं कतराये नहीं उनसे दो दो हाथ करे। इस इकाई मैं को यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि इन तत्रो की इच्छाए मनुष्य को मनुष्य बनाये रखने मे कम अपने को यथावत रखने के लिए उसे पुर्जा बनाने की अधिक है 'मैं को पुर्जा नहीं पुरुष बनना है

शुन शेप हो या नचिकेता जाबाल हो या अष्टावक्र भले मिथकीय पात्र हो पर ये पात्र हमे अपने यथार्थ को निपट रूप मे देखने को बाध्य करते है

- हरीश भादानी